इकाई - Ist प्लेटो

आदर्श राज्य Political Science 5 14 07 22

प्लेटो (428-347 ई.पू.)।

प्लेटो का पहले नाम एरिस्टोक्लीज था जिसका अर्थ सबसे अच्छा या प्रसिद्ध होता है।
प्लेटो का जन्म 428 ई. पू. यूनान के ऐथेन्स प्रान्त में हुआ। प्लेटो अभिजात परिवार से था, जब प्लेटो पैदा हुआ जब एथेन्स में लोकतंत्र था और इसी समय स्पार्टा के साथ भयंकर युद्ध लगा हुआ था जिसे पैलोपोनेसियन युद्ध कहा जाता है।
प्लेटो जब युवा अवस्था में था तब वह सुकरात के विचारों से प्रभावित हुआ और उसका शिष्य बन गया था। इस समय यूनान में "तीस लोगों का शासन" व्यवस्था थी। इसी शासन व्यवस्था ने सुकरात को युवाओं को पथभ्रष्ट करने का आरोप लगाकर तथा यूनानी परम्पराओं से छेड़छाड़ के लिए मृत्युदण्ड, स्वसुरक्षा की चिंता व राजनीति से मोहभंग के कारण प्लेटो 11 साल तक इटली, मिस्र व सिसली की तरफ भटकता रहा। 388 ई. पू. वह वापस से लौटा।
→ ऐथेन्स में उसने यूरोप के प्रथम विश्व विद्यालय के रूप में एकेडमी की स्थापना की।
* अकादमी के दरवाजे पर लिखा होता था कि "जिन लोगों को गणित का ज्ञान नहीं है, वह अन्दर नहीं आये।"

सोफिस्ट

500 ई. पू. जब एथेन्स में लोकतंत्र आया तो वहाँ विचार स्वतंत्रता आयी। इसी विचार स्वतंत्रता के कारण सोफिस्ट विचारक आये।

सौफिस्ट विचारक वे लोग थे जो भ्रमण कर शिक्षा प्रदान करते थे जिसमें आधे प्रोफेसर, आधे पत्रकार और आधे विचारक माने जाते थे ये मूलतः गैर यूनानी थे इस कारण इन्हें मैटिक्स कहा जाता था और जो लोग यूनानी थे उन्हें हेलनेक कहा जाता था। इनके अध्ययन का मूल क्षेत्र मनुष्य था छलकपट

सुकरात

यह यूनान का एक प्रसिद्ध दार्शनिक था। उसका मानना था कि मनुष्य का जीवन तब सफल होगा जब वह ज्ञान की प्राप्ति कर लेगा। ज्ञान की प्राप्ति के लिए वह वाद-विवाद, वार्तालाप और तर्क विद्या का उपयोग किया करता था।

सुकरात ज्ञान के दो स्वरूप मानता था

(A) बाह्य ज्ञान (B) वास्तविक ज्ञान

(A) बाह्य ज्ञान - लोग व्यवहार का ज्ञान या भौतिक पदार्थों का ज्ञान।

(B) वास्तविक ज्ञान - यह ज्ञान आन्तरिक रूप से प्राप्त किया जाता है जिसमें मनुष्य उसके जीवन का उद्देश्य क्या है।

सद्गुण ही ज्ञान है।

ज्ञान की प्राप्ति ही सद्गुण है।

Question :- प्लेटो के न्याय सिद्धान्त को समझाइए।
Answer :- प्लेटो का न्याय सिद्धान्त :-
प्लेटो ने अपनी पुस्तक 'द रिपब्लिक' में न्याय का सिद्धान्त दिया है। 'द रिपब्लिक' में न्याय संवाद शैली के रूप में लिखा गया है। न्याय प्लेटो के दर्शन का केन्द्रिय विषय है। रिपब्लिक का उपशीर्षक न्याय से सम्बन्धित है।

Concerning Justice

प्लेटो पहला विचारक है जिसने न्याय को सुव्यवस्थित रूप से प्रतिपादित किया। प्लेटो ने न्याय का प्रतिपादन करते हुए पूर्ववर्ती विचारको के सिद्धान्तों का खण्डन किया है।

पूर्ववर्ती सिद्धान्त :-
1. परम्परागत सिद्धान्त :-
(A) सैफालस के अनुसार - न्याय का अर्थ सत्य बोलना एवं ऋण चुकाना है।
प्लेटो इसका खण्डन करता है। प्लेटो के अनुसार न्याय एक सद्गुण है, जो सदा उचित रहता है। जबकि सत्य बोलना और ऋण चुकाना कुछ विशेष परिस्थितियों में अनुचित भी हो सकता है।

Ex. - सत्य बोलना → सैनिक गोपनीय रहस्य बता दे तो अनुचित होगा।
ऋण चुकाना → पागल मित्र को हथियार लौटाना।

(B) पॉलीमार्क्स के अनुसार न्याय :-
पॉलीमार्क्स न्याय को एक ऐसी कला मानता है जिसमें मित्र के साथ मित्रतापूर्वक व्यवहार तथा शत्रु के साथ शत्रुतापूर्वक न्याय करना न्याय कहलाता है।

प्लेटो इसका खण्डन करते हुए तीन तर्क देता है –

(क) मित्र और शत्रु की पहचान करना सरल नहीं है,

(ख) नैतिक दृष्टि से यह गलत है कि शत्रु के साथ शत्रुता का व्यवहार किया जाए,

(ग) कला का सदुपयोग व दुरूपयोग दोनों हो सकता है, जबकि न्याय कभी बुरा नहीं हो सकता,

(2) उग्रवादी सिद्धान्त :-

(A) थ्रेसीमेकस के अनुसार

- न्याय शक्तिशाली का हित है।
- अन्याय न्याय से बेहतर है।

थ्रेसीमेकस प्राचीन यूनान में सोफिस्ट समुदाय का दार्शनिक था। इनके अनुसार सम्पूर्ण प्रकृति में सत्य ही शक्ति है।

प्रकृति का यही वास्तविक नियम है और मानव मानव जीवन भी इसी नियम से संचालित होता है। समाज मे शक्तिशाली व्यक्ति अपनी सुरक्षा के लिए राज्य व सरकार का निर्माण करते है। जो उसके माध्यम से अपना स्वार्थ सिद्ध करते है चूँकि न्याय का अर्थ सरकार व संविधान निर्धारित करता है। अतः न्याय शक्तिशाली का हित है। थ्रेसीमेकस यह मानता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहिए क्योंकि यही प्रकृति का वास्तविक नियम है चूँकि न्याय के माध्यम से शासक वर्ग अपना स्वार्थ सिद्ध करता है अतः

शासक वर्ग भी अपना स्वार्थ सिद्ध करेगा और संविधान व सरकार के विरुद्ध आचरण करेगा। शासन / सरकार के द्वारा उसका आचरण अन्यायपूर्ण माना जाएगा लेकिन यह अन्याय न्याय से बेहतर है।

प्लेटो के अनुसार शासक का गुण लोककल्याण है। अतः शासक के आदर्श को स्वार्थसिद्धी नहीं माना जा सकता। प्लेटो के अनुसार थ्रेसिमेकस ने केवल कुछ शासकों को देखकर शासन की अपनी धारणा विकसित कर ली।

③ व्यवहारवादी सिद्धान्त :-

ग्लाउकन के अनुसार –

(A) न्याय भय का शिशु है।

(B) न्याय एक बनावटी विचार है।

ग्लाउकन के अनुसार निर्बल व्यक्ति सबल व्यक्ति से अपनी रक्षा करने के लिए आपस में समझौता करते है, राज्य और संविधान निर्माण करते है ताकि सबल व्यक्तियों पर नियंत्रण लगाया जा सके और निर्बल व्यक्तियों की रक्षा हो सके। अतः न्याय दुर्बल की आवश्यकता है और भय का शिशु है। यह मानव सभ्यताओं की देन नहीं है बल्कि न्याय का सिद्धान्त भय के कारण बनाया गया है।

प्लेटो के अनुसार मनुष्य स्वभावतः ही न्यायपूर्ण आचरण करना चाहते है। अतः न्याय भय का शिशु या बनावटी ना होकर एक स्वभाविक विचार है।

प्लेटो के अनुसार न्याय सिद्धान्त :-

प्लेटो ने न्याय को नैतिकता के सन्दर्भ में देखा है। प्लेटो न्याय के दो रूप बताता है -

न्याय के स्वरूप → व्यक्ति के लिए
न्याय के स्वरूप → राज्य के लिए

(1) व्यक्ति के लिए न्याय :-

प्लेटो के अनुसार मानव आत्मा में तीन गुण पाये जाते हैं -

व्यक्ति की आत्मा → बुद्धिमता
व्यक्ति की आत्मा → साहस
व्यक्ति की आत्मा → इन्द्रिय तृष्णा

जब ये तीनों गुण मनुष्य की आत्मा में उचित मात्रा में पाये जाते हैं तो व्यक्ति के लिए न्याय की सिद्धी होती है और ऐसा व्यक्ति ही न्यायपूर्ण माना जाता है। यहाँ उचित अनुपात से तात्पर्य है कि मनुष्य की आत्मा में उस गुण की प्रधानता जो उसके वर्ग का गुण है इसी आधार पर प्लेटो कहता है कि न्याय मानव आत्मा की उचित अवस्था है।

प्लेटो के अनुसार -

(A) बुद्धिमता → ज्ञान के प्रति लगाव - शासक / दार्शनिक

(B) साहस → वीरता के प्रति लगाव - सैनिक

(C) इन्द्रिय तृष्णा → सांसारिक विषयों से लगाव → उत्पादक

(3) राज्य के लिए न्याय :-
प्लेटो के अनुसार राज्य व्यक्ति का वृहत्त रूप है। प्लेटो यह मानता है कि मानव आत्मा में 3 गुण पाये जाते हैं - बुद्धिमता, साहस व इन्द्रिय तृष्णा। इन तीनों गुणों को प्रतिनिधित्व करने वाले 3 वर्ग राज्य में पाये जाते हैं। बुद्धिमता के प्रति शासक वर्ग द्वारा वीरता का प्रतिक यौद्धा वर्ग के द्वारा तथा इन्द्रिय तृष्णा का प्रतिनिधित्व उत्पादक वर्ग के द्वारा किया जाता है जब समाज के लिए तीनों वर्ग अपने लिए निर्धारित कर्त्तव्यों का प्रयोग करते हैं और अन्य वर्गों के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करते हैं तो ऐसा राज्य न्यायपूर्ण होता है।
इस प्रकार प्लेटो के दर्शन में न्याय का अर्थ कर्त्तव्यपालन है और इसकी तुलना भारतीय ग्रन्थों में वर्णित स्वधर्म पालन के सिद्धान्त से की जा सकती है।
प्लेटो के न्याय विचार में तीन सिद्धान्त दिखते हैं -
(A) कार्य विशिष्टीकरण का सिद्धान्त
(B) अहस्तक्षेप का सिद्धान्त
(C) समरसत्ता का सिद्धान्त

प्लेटो के न्याय सिद्धान्त की आलोचना :-
(i) प्लेटो का न्याय सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है क्योंकि एक व्यक्ति की आत्मा में तीनों गुण समान रूप से प्रधान हो सकते हैं, या फिर जीवन की अलग-2 अवस्थाओं में गुणों का अनुपात बदल सकता है।

(ii) बार्कर के अनुसार - प्लेटो का न्याय सिद्धान्त एकपक्षिय है क्योंकि इसमें न्याय के कानूनी पक्ष / पहलु की अवहेलना की गयी है।

(iii) प्लेटो का न्याय सिद्धान्त भारतीय वर्ण व्यवस्था की तरह भेदभाव मूलक है।

(iv) प्लेटो का न्याय सिद्धान्त के द्वारा दार्शनिक शासक की व्यवस्था करता है, जो तानाशाही की ओर लेकर जाता है।

प्लेटो के न्याय सिद्धान्त का महत्व :-

(i) प्लेटो पहला दार्शनिक है जिसने न्याय के व्यवस्थित सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

(ii) प्लेटो ने व्यक्ति व राज्य दोनों को न्यायपूर्ण बनाने पर बल दिया।

13
19 07 22

Question :- 2 प्लेटो के शिक्षा सिद्धान्त को समझाइए।

Answer :- प्लेटो ने अपनी पुस्तक 'रिपब्लिक' में शिक्षा की व्यवस्थित रूप रेखा प्रस्तुत की। जिसके कारण रूसो ने शिक्षा सिद्धान्त को सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त बताया और 'द रिपब्लिक' को शिक्षा पर लिखा गया महानतम ग्रंथ बताया।

प्लेटो पहला विचारक था जिसने न्याय की तरह शिक्षा को भी व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में बताया।

प्लेटो का उद्देश्य न्याय पर आधारित एक आदर्श राज्य की स्थापना करना था जो दार्शनिक शासक द्वारा शासित होगा। अपनी शिक्षा योजना के द्वारा वह यह निर्धारित करता है कि दार्शनिक शासक कैसे बनेगा, सैनिक वर्ग में कौन-2 शामिल होंगे और उत्पादक वर्ग का स्वरूप क्या-2 होगा?

इन सभी बातों से हम कह सकते हैं कि प्लेटो शिक्षा सिद्धान्त के माध्यम से तीनों वर्गों का आधारस्वरूप तैयार करता है।

~~स्पार्टा~~ प्लेटो ने अपनी शिक्षा योजना यूनान के एथेन्स और स्पार्टा से प्राप्त की है।

शिक्षा व्यवस्था

	एथेन्स	स्पार्टा
गुण:-	• पाठ्यक्रम विस्तृत था • बहुआयामी शिक्षा • साहित्य, कला, दर्शन, संगीत, व्यायाम की शिक्षा (व्यक्तित्व का विकास)	• राज्य द्वारा नियंत्रित शिक्षा व्यवस्था • स्त्री-पुरुष शिक्षा पर बल • सैनिक शिक्षा पर बल
कमी:-	• परिवार या निजी हाथों में शिक्षा • स्त्री शिक्षा निषेध • सैनिक शिक्षा कमजोर	• सैनिक शिक्षा पर ही बल • पाठ्यक्रम संकुचित • सामाजिक शिक्षा का अभाव (व्यक्तित्व विकास का अभाव)

20/04/22

प्लेटो ने एथेन्स और स्पार्टा की शिक्षा योजना में समन्वय करके एक एथेन्स के लिए एक शिक्षा पद्धति तैयार की जिसमें उसने एथेन्स से बहुआयामी शिक्षा, व्यक्तित्व का विकास, साहित्य, कला व दर्शन आदि चीजें ग्रहण की एवं स्पार्टा से उसने राज्य द्वारा नियंत्रित शिक्षा, स्त्री-पुरुष समानता व सैनिक शिक्षा को अपनाया।

प्लेटो ने एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था की स्थापना की जिसका मुख्य कारण राज्य को एक दार्शनिक शासक और समाज के लिए तीन वर्गों का निर्धारण किया गया।

प्लेटो की शिक्षा योजना:-

प्लेटो ने अपनी शिक्षा योजना को तीन भागों में बाँटा है-

→ प्रारम्भिक शिक्षा (20 वर्ष तक)
→ उच्च शिक्षा (20-35 वर्ष तक)
→ व्यवहारिक शिक्षा (35-50 वर्ष तक)

प्रारम्भिक शिक्षा योजना (जन्म से 20 वर्ष तक)
→ जन्म से 6 वर्ष तक → धर्म और नैतिकता की शिक्षा।
→ 6-18 वर्ष तक → संगीत व व्यायाम की शिक्षा।
→ 18-20 वर्ष तक → सैनिक शिक्षा।
↓
परीक्षा

20 वर्ष की आयु में एक परीक्षा होगी, जिसमें जो व्यक्ति फेल हो गया उसे उत्पादक वर्ग में भेज दिया जाएगा और जो Pass हो जाएगा उसे उच्च शिक्षा के लिए भेज दिया जाएगा।

उच्च शिक्षा :- (20 से 35 वर्ष)
→ 20 से 30 वर्ष तक → गणित, ज्यामिति की शिक्षा
↓
परीक्षा

30 वर्ष की आयु में एक परीक्षा होगी इसमें जो Fail हो गया वह सैनिक वर्ग में जाएगा और जो Pass हो गया वह दार्शनिक शासक वर्ग में जाएगा।

→ 30 से 35 वर्ष तक → दर्शनशास्त्र, तर्कशास्त्र व समाजशास्त्र की शिक्षा दी जाएगी

व्यवहारिक शिक्षा :- (35 से 50 वर्ष तक)
15 वर्ष तक दार्शनिक शासक को समाज में व्यवहारिक शिक्षा लेने के लिए भेज दिया जाएगा

सो उसके पश्चात जो व्यक्ति बच गया वह दार्शनिक राजा बन जाएगा।

7/22
प्लेटो की शिक्षा योजना की विशेषताएँ :-
प्लेटो राज्य नियंत्रण शिक्षा व्यवस्था में विश्वास करता है। प्लेटो के अनुसार शिक्षा व्यक्ति और समाज दोनों के लिए उपयोगी है।

(i) व्यक्ति के सन्दर्भ में शिक्षा :-
प्लेटो यह मानता है कि ज्ञान मनुष्य का सबसे बड़ी विशेषता है और शिक्षा के द्वारा ही हम ज्ञान प्राप्त करते है। प्लेटो के शब्दों में समस्त ज्ञान अनुसरण मात्र है। प्लेटो यह मानता है कि हमारे भौतिक जगत से परे एक अन्य जगत भी है जिसे वह विचार जगत या प्रत्यय जगत भी कहता है। (world of ideas)
विचार जगत में वस्तुएँ अपने पूर्ण स्वरूप में पायी जाती है। मृत्यु के बाद आत्मा प्रत्यय जगत या विचार जगत में जाती है। और विश्व की सभी वस्तुओं को अपने पूर्ण स्वरूप में देखती है।

(ii) समाज के सन्दर्भ में शिक्षा :-
शिक्षा समाज के लिए उपयोगी है क्योंकि शिक्षा से समाज में विभिन्न वर्गों का निर्माण होता है और दार्शनिक शासक मिलते है।

(iii) प्लेटो की शिक्षा योजना में उच्च शिक्षा केवल शासक वर्ग के ~~सदस्यों~~ सदस्यो के लिए है

प्लेटो स्त्री - पुरुष के लिए समान शिक्षा की व्यवस्था करता है।

(iv) प्लेटो ने बहुआयामी शिक्षा, सैद्धान्तिक, व्यवहारिक और दार्शनिक शिक्षा की बात करता है।

(v) सैनिक शिक्षा (युद्ध के लिए) की व्यवस्था करता है।

शिक्षा योजना की आलोचना / कमियाँ :-

(i) प्लेटो ने उच्च शिक्षा केवल शासक वर्ग के लिए ही निर्धारित की है, जो समाज का काफी छोटा हिस्सा है।

सेबाइन ने कहा था कि केवल अच्छे शासकों से ही राज्य का कल्याण नहीं हो सकता।

(ii) प्लेटो की शिक्षा योजना अत्यधिक लम्बी व खर्चीली है।

(iii) 50 वर्ष तक शिक्षक पर निर्भर रहने वाले शासक स्वावलम्बी नहीं बन पाएंगे।

(iv) प्लेटो की शिक्षा में गणित व ज्यामिति पर अधिक बल दिया गया है जबकि साहित्य व कला की उपेक्षा की गई है।

(v) प्लेटो की शिक्षा योजना में व्यक्ति के परीक्षा में एक बार असफल होने के बाद दूसरा अवसर प्रदान नहीं किया गया।

(vi) प्लेटो की शिक्षा योजना काल्पनिक है इसे व्यवहार में लागू नहीं किया जा सकता है।

महत्व :-

(i) राज्य नियंत्रित शिक्षा व्यवस्था का विचार आज भी प्रासंगिक है।

(ii) स्त्री - पुरुष शिक्षा का विचार आज भी प्रासंगिक है।

(iii) प्लेटो की शिक्षा योजना में शारीरिक व मानसिक शिक्षा आज भी प्रासंगिक है।

(iv) सैनिक शिक्षा आज भी प्रासंगिक है।

Question:- प्लेटो के साम्यवादी सिद्धान्त को समझाइये। क्या प्लेटो प्रथम फांसीवादी था चर्चा करो।

Answer:- न्याय पर आधारित एक आदर्श राज्य की स्थापना करना प्लेटो के दर्शन का केन्द्र था। और उसकी प्राप्ति के लिए उसने दार्शनिक राजा की व्यवस्था की। दार्शनीक राजा का निर्माण कैसे हो? इसके लिए उसने शिक्षा सिद्धान्त की व्यवस्था की। इसी शिक्षा सिद्धान्त से समाज में तीन वर्ग स्थापित होते है (i) दार्शनिक वर्ग (ii) सैनिक वर्ग व (iii) उत्पादक वर्ग।

जब प्लेटो दार्शनिक शासक की कल्पना कर रहा था तब प्लेटो के सामने दो चुनौतियाँ आई -

पहली	दूसरी
जब आदर्श राज्य में तीन वर्ग स्थापित हो जायेगे ये वर्ग दार्शनिक शासक के विरुद्ध क्रान्ति न कर दे।	कहीं दार्शनिक राजा अपने पद से भ्रष्ट ना हो जाये
इस चुनौति के लिए प्लेटो ने उदात्त झूठ का सहारा लिया अर्थात् उसने बताया कि जो दार्शनिक वर्ग है उनका निर्माण सोने से हुआ है सैनिक वर्ग का निर्माण चाँदी से तथा उत्पादक वर्ग का निर्माण काँसे से हुआ है।	इस चुनौति के समाधान के लिए प्लेटो ने साम्यवाद की कल्पना की है।

प्लेटो का साम्यवाद :-

स्त्रियों का साम्यवाद   सम्पत्ति का साम्यवाद

(i) स्त्रियों का साम्यवाद :

प्लेटो पत्नियो / स्त्रियों के साम्यवाद के द्वारा शासक वर्ग के सदस्यों के लिए मनाही करता है। अर्थात् व्यक्तिगत परिवार का निषेध करता है। उसका मानना है कि शासक वर्ग का विवाह नहीं होना चाहिए ना ही उनकी अपनी कोई नीजि सन्तान होनी चाहिए।

शासक वर्ग के सदस्यों को सामूहिक जीवन बिताना चाहिए और उनके बीच कोई व्यक्तिगत या स्थायी रिश्ता नहीं होना चाहिए। उनके बीच आपस में अस्थायी यौन संबंध बनेंगे ताकि कोई किसी का पति या पत्नी ना हो इन सम्बन्धों से जो सन्तान की उत्पत्ति होगी वह सन्तान सब की साझी सन्तान होगी और उनका भरण-पोषण राज्य द्वारा किया जाएगा ऐसी सन्तानें राज्य द्वारा पालनागृहों में पाली जाएंगी और उनकी पहचान गोपनिय हो जाएगी।

पत्नियों के साम्यवाद के पक्ष में तर्क :-

(i) शासक वर्ग के लिए व्यक्तिगत परिवार व्यवस्था का निषेध करके प्लेटो उनके बीच आपसी संघर्ष को तोड़ना चाहता है।

(ii) शासक वर्ग के लिए व्यक्तिगत परिवार का निषेध करके प्लेटो सम्पूर्ण शासक वर्ग को एक परिवार का रूप देना चाहता है।

(iii) शासक वर्ग को परिवार के मोह से बचाना चाहता है।

(iii) पत्नियों के साम्यवाद के माध्यम से प्लेटो स्त्रियों की मुक्ति को सुनिश्चित करता है क्योंकि उसकी मान्यता है कि परिवार में स्त्री की स्वाधिनता समाप्त हो जाती है। और वह घरेलू कार्य व बच्चे पालने तक ही सीमित रह जाती है।

(iv) परिवार के साम्यवाद के माध्यम से प्लेटो श्रेष्ठ सन्तान की प्राप्ति करना चाहता है।

आलोचना :-

(i) अरस्तु के अनुसार परिवार नागरिक की प्रथम पाठशाला है जिसमें व्यक्ति प्रेम, सेवा, सहयो जैसे गुणों से प्रेरित होता है।

(ii) प्लेटो का साम्यवाद सिद्धान्त अनैतिक यौन संबंधो पर आधारित है।

(iii) संरक्षक वर्ग का व्यक्तिगत जीवन समाप्त हो जाएगा।

(iv) परिवार व्यक्ति के जीवन में सामाजिक व मानसिक शान्ति प्रदान करता है और एक नविन ऊर्जा का संचार करता है।

② सम्पत्ति का साम्यवाद :-

प्लेटो ने शासक वर्ग के सदस्यों के लिए निजी सम्पत्ति की मनाही की है, जिसे सम्पत्ति का साम्यवाद कहते हैं।

शासक वर्ग के सदस्यों को सार्वजनिक घरों में रहना चाहिए, सार्वजनिक भोजनालयों में भोजन करना चाहिए और सम्पत्ति के संग्रह से बचना चाहिए। उन्हें सोना, चाँदी जैसी मूल्यवान वस्तुएँ छूनी भी नहीं चाहिए।

प्लेटो ने चार आधारों पर सम्पत्ति के साम्यवाद की बात कहीं है:-
- मनोवैज्ञानिक आधार
- दार्शनिक
- राजनैतिक
- व्यवहारिक

(i) मनोवैज्ञानिक :-
इस आधार पर प्लेटो मानता है कि शासक वर्ग के सदस्यों में बुद्धिमता का गुण प्रधान होता है। और इन्द्रिय तृष्णा का गुण गौण होना चाहिए। यदि शासक वर्ग सम्पत्ति का संग्रह करने लग गया तो शासक भ्रष्ट हो जाएगा।

(ii) दार्शनिक आधार :-
इस आधार पर कार्य विशिष्टीकरण के सिद्धान्त के आधार पर प्लेटो यह मानता है कि हर व्यक्ति को अपने कार्य का विशेषज्ञ होना चाहिए। यह तब ही सम्भव है जब शासक वर्ग शासन करे, सम्पत्ति का संग्रहण ना करे।

(iii) राजनीतिक आधार :-
प्लेटो राजनीतिक व आर्थिक शक्ति एकीकरण को रोकना चाहता है अर्थात् वह शासक को राजनीतिक व आर्थिक शक्ति प्रदान नहीं करना चाहता है।

(iv) व्यवहारिक आधार :-
व्यवहारिक आधार पर प्लेटो भ्रष्टाचार को कम करना चाहता है।

आलोचना :-

(i) सम्पत्ति का साम्यवाद मानव की स्वभाविक प्रकृति के विरुद्ध है।

(ii) सम्पत्ति का साम्यवाद केवल शासक वर्ग पर लागू होता है अतः यह अर्द्ध साम्यवाद है।

(iii) अरस्तु के अनुसार निजी सम्पत्ति से दानशीलता व उदारता की बात भावना आती है।

(iv) साम्यवाद का विचार जीवन के सामान्य अनुभव के विरुद्ध है। मानव समाज के इतिहास में ऐसा साम्यवाद कहीं नहीं देखा गया

निष्कर्ष :-

प्लेटो ने साम्यवादी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। प्लेटो ने समाज को तीन भागों में बाँटा (A) दार्शनिक वर्ग (B) सैनिक वर्ग (C) उत्पादक वर्ग।
प्लेटो ने साम्यवाद को दो भागों में बाँटा स्त्रियों का साम्यवाद या और पत्नियों का साम्यवाद और सम्पत्ति का साम्यवाद

परम्परागत साम्यवाद व आधुनिक साम्यवाद में अन्तर व समानता :-

समानता –

(i) दोनों विचारधाराएँ व्यक्ति की तुलना में समाज को महत्व देता है।

(ii) दोनों का उद्देश्य एक आदर्श समाज की स्थापना करना है।

(iii) दोनों व्यक्तिगत सम्पत्ति का विरोध करते हैं।

(iv) दोनों परिवार व विवाह के विरोधी हैं।

असमानता :-

(i) प्लेटो का साम्यवाद केवल शासक वर्ग के लिए है जबकि आधुनिक साम्यवाद पूरे समाज के लिए है।

(ii) प्लेटो का साम्यवाद वर्ग समन्वय पर आधारित है जबकि आधुनिक साम्यवाद वर्ग संघर्ष पर आधारित है।

(iii) प्लेटो का साम्यवाद का उद्देश्य आदर्श दार्शनिक राजा की स्थापना करना है जबकि कार्ल मार्क्स के साम्यवाद का उद्देश्य वर्ग रहित, राज्य रहित ~~सब्य~~ व्यवस्था की स्थापना करना है।

निष्कर्ष :-

Question: प्लेटो के उपआदर्श राज्य को समझाइए।

Answer: प्लेटो ने आदर्श राज्य का सपना देखा। जिसका शासन संचालन दार्शनिक शासक द्वारा किया जाएगा परन्तु प्लेटो ने अंतिम समय में यह महसूस किया कि समाज में आदर्श राज्य की स्थापना के लिए दार्शनिक शासक आवश्यक नहीं हैं।

आदर्श राज्य में दार्शनिक शासक बुद्धिशाली होगा और वह बुद्धिशाली व्यक्ति अपनी चेतना के आधार पर शासन संचालन करेगा जब प्लेटो को दास बनाया गया उस समय प्लेटो ने महसूस किया कि मानव का व्यवहार परिवर्तनशील है और दार्शनिक शासक भी चुँकि एक मानव ही है और वह भी अपने निर्णयों व नियमों में परिवर्तन कर सकता है।

अतः प्लेटो ने एक अन्तिम पुस्तक की रचना कि जो The Laws थी जिसमें प्लेटो ने उप-आदर्श राज्य (Sub-Ideal State) की संकल्पना की। प्लेटो का यह अन्तिम ग्रंथ था जो सबसे विस्तृत ग्रंथ था।

प्लेटो ने अपने उप-आदर्श राज्य में निम्न तत्वों का जिक्र किया है जिसमें उप-आदर्श राज्य की संकल्पना को दर्शाया गया है जो निम्न है –

(i) आत्मसंयम का महत्व :–

रिपब्लिक में प्लेटो ने न्याय का आधार आत्मसंयम को माना था। अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति अपने वर्ग के अनुसार कार्य करेगा और दूसरे के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। ~~किसी~~ इसी चीज को 'द लॉज

में स्वीकार किया है।

(ii) कानून का सिद्धान्त :-

प्लेटो के उप आदर्श राज्य का आधार कानून का सिद्धान्त है। जबकि प्लेटो के आदर्श राज्य का आधार न्याय का सिद्धान्त था और यह न्याय करने का कार्य दार्शनिक राजा करता था। दार्शनिक शासक कानून की बजाय अपनी बुद्धि के बल पर करता था।

परन्तु प्लेटो ने यह महसूस किया कि कानून निर्माण एक व्यक्ति की इच्छा का परिणाम नहीं होना चाहिए, जैसा कि दार्शनिक शासक करता है।

प्लेटो के अनुसार कानून से व्यक्ति सब की भलाई, व्यक्ति की भलाई को पूर्ण शर्त को अपना कर्त्तव्य मानता है। कानून मस्तिष्क की अभिव्यक्ति है। यह अभिव्यक्ति परम्पराओं, प्रथाओं के रूप में आती है। और लम्बे समय तक रहने के कारण कानून का रूप ले लेती है।

(iii) इतिहास की शिक्षाएँ :-

व्यक्ति या राज्य को कानून निर्माण करते समय इतिहास के अनुभव के आधार पर करना चाहिए।

(iv) मिश्रित राज्य :-

प्लेटो के उप आदर्श राज्य की प्रमुख विशेषता यह है कि उसके राज्य का शासक स्वरूप मिश्रित होगा। शासक व्यवस्था के

निर्माण में राजा, मंत्री, कुलिनतंत्र के लोग व जन साधारण व्यक्ति भी शामिल होगे। अ

अतः राज्य में समाज तीन स्वरूपों में बटा हुआ है →

→ राजतंत्रात्मक
→ कुलिनतंत्रात्मक
→ जनतंत्रात्मक

सेबाइन के अनुसार :-

लॉज में प्लेटो का निश्चित राज्य राजतंत्रात्मक शासन की बुद्धि और लोकतंत्रात्मक शासन की समन्वय है।

Unit 2

अरस्तु

Question:- अरस्तु प्रथम राजनीतिक वैज्ञानिक के रूप में कैसे ? समझाइए।

Answer: राजनीति विज्ञान की शुरुआत यूनान से मानी जाती है। राजनीतिक परम्परा को व्यवस्थित करने का प्रथम प्रयास सोफिस्टो, सुकरात, प्लेटो, अरस्तु द्वारा किया गया था। अरस्तु जो कि प्लेटो का शिष्य था उस जिसने राजनीति विज्ञान को एक विषय के रूप में व्यवस्थित करने का कार्य किया क्योंकि राजनीति विज्ञान का पहला अध्ययन दर्शनशास्त्र, नीतिशास्त्र व इतिहास एवं समाजशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता था।

08/22

अरस्तु :-

अरस्तु का जन्म 384 ई. पू. मेसिडोनिया के स्टेगीरा नामक स्थान पर हुआ। अरस्तु के पिता मेसेडोनिया के राजवैद्य थे अतः बचपन में इन्होंने जड़ी-बुटियों, औषधियों के माध्यम से व्यवहारिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन पर बल दिया। और अरस्तु ने 17 वर्ष की आयु में प्लेटो की एकेडमी (अकादमी) को Join किया

निम्न कारणों के आधार पर अरस्तु को प्रथम राजनीतिक वि वैज्ञानिक कहा गया :-

(i) विषय के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण :-
अपने सिद्धान्तों के प्रतिपादन के आधार पर उसने राजनीतिक संस्थाओं, व्यवस्थाओं का अध्ययन प्रारंभ किया जिसमें

प्रैक्सी

व्यवस्थित, क्रमबद्ध स्वरूप देखा गया जैसे - अरस्तु ने अपनी पुस्तक 'द पॉलिटिक्स' में 158 देशों के संविधान का अध्ययन किया।

(ii) राजनीति विज्ञान को स्वतंत्र विज्ञान का रूप प्रदान करना :-

राजनीति विज्ञान को एक विषय के रूप में मान्यता सर्वप्रथम अरस्तु द्वारा दिलाई गयी। राजनीति विज्ञान का उससे पूर्व अध्ययन दर्शनशास्त्र, नीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र, विधिशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता था। परन्तु अरस्तु ने राजनीति को दर्शनशास्त्र से अलग कर एक विषय के रूप में मान्यता दिलायी। और राजनीति विज्ञान को 'मास्टर science' कहा।

(iii) यथार्थवादी विचार :-

अरस्तु प्रथम विचारक है, जिसने राजनीति पर यथार्थवादी व व्यवहारिक दृष्टिकोण से विचार किया। अपनी यथार्थवादिता के कारण ही अरस्तु सम्पत्ति के साम्यवाद, पत्नियों के साम्यवाद एवं दार्शनिक शासक जैसे कठोर कल्पनाएं नहीं करता बल्कि वह जनसाधारण एवं शासक के मध्य बुद्धि, विवेक, सहयोग के माध्यम से शासन की बात करता है।

(iv) वैज्ञानिक पद्धति :-

अरस्तु ने अपने सिद्धान्तों में वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग किया है जैसे - आगमनात्मक व तुलनात्मक पद्धति। आगमनात्मक पद्धति के माध्यम से वह वैज्ञानिक

अध्ययन पर बल देता है (व्यवहारिक)
तुलनात्मक पद्धति में उसने 158 देशों के संविधान का अध्ययन किया है।

02/08/22

(v) राज्य के पूर्ण सिद्धान्त क्रमबद्ध निरूपण :
अरस्तु प्रथम पश्चिमी विचारक है जिसने क्रमबद्ध रूप में राज्य का पूर्ण सिद्धान्त प्रस्तुत किया राज्य के जन्म और उसके विकास से लेकर उसके स्वरूप संविधान, नागरिकता, शासन व्यवस्था, कानून की सर्वोच्चता, क्रान्ति आदि विषयों का वर्णन किया। और ये सभी सिद्धान्त व व्यवस्थाएँ वर्तमान समय में आधुनिक राजनैतिक शास्त्रियों का विषय बनी हुई है।

अरस्तु ने मनुष्य को एक राजनीतिक प्राणी के रूप में व्यक्त किया है। उसका कथन था कि - "जो व्यक्ति राज्य में नहीं रहता वह या तो दानव है या फिर देवता।"

(vi) कानून की सर्वोच्चता का प्रतिपादन :-
अरस्तु ने कानून की सर्वोच्चता का प्रतिपादन किया है। उसने अपने गुरु प्लेटो के दार्शनिक शासक सिद्धान्त में विश्वास नहीं किया है उसने व्यक्ति की बजाय कानून के शासन को महत्ता दी है। आधुनिक समय में कानून की व्यवस्थित अवधारणा डायसी द्वारा प्रस्तुत की गई।

निष्कर्ष :-
अरस्तु व्यवहारिक एवं यथार्थवादी विचारक

था जिसने अपने सिद्धान्तों का निरूपण वैज्ञानिक आधार पर किया अर्थात् उसने अपने अध्ययनों में वैज्ञानिक की भाँति पहले तथ्यों की खोज की फिर उन तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाले और उन्हें सिद्धान्तों का स्वरूप प्रदान किया।

निष्कर्ष :-

अरस्तु व्यवहारिक व यथार्थवादी विचारक था जिसने अपने सिद्धान्तों का निरूपण वैज्ञानिक आधार पर किया अर्थात् उसने अपने अध्ययनों में वैज्ञानिक की भाँति पहले तथ्यों की खोज की फिर उन तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाले और उन्हें सिद्धान्तों का स्वरूप प्रदान किया

Question:- अरस्तु के राज्य सम्बन्धित विचारों एवं संविधानों के वर्गीकरण का सिद्धान्त को समझाइए।

Answer:-

अरस्तु के राज्य सम्बन्धी विचार :-

अरस्तु ने राज्य सम्बन्धित सिद्धान्तों का वर्णन अपनी प्रथम पुस्तक पॉलिटिक्स में किया। अरस्तु ने अपने गुरु प्लेटो के समान सोफिस्ट लोग के उस मत का खण्डन करता था कि राज्य एक परम्परागत संस्था है जिसका अपनी सदस्यों की आस्था पर कोई वास्तविक अधिकार नहीं है।

अरस्तु यह सिद्ध करना चाहता है कि राज्य का जन्म विकास के कारण हुआ है यह एक स्वभाविक संस्था है। इसका उद्देश्य व कार्य नैतिक है। यह सभी संस्थाओं में सबसे श्रेष्ठ एवं उच्चा संस्था है।

राज्य के अस्तित्व का मूल कारण व्यक्ति प्रारम्भ में व्यक्ति की सुरक्षा था परन्तु समय परिवर्तन के साथ राज्य का उद्देश्य अब व्यक्ति के सत् जीवन की प्राप्ति मात्र रह गया है।

अरस्तु के राज्य संबंधी विचारों को निम्न बिन्दुओं से समझा जा सकता है

(i) राज्य की उत्पत्ति :-

अरस्तु के अनुसार राज्य विकास का परिणाम हैं। अरस्तु का राज्य एक प्राकृतिक संस्था है जिसका जन्म व विकास प्राकृतिक रूप से हुआ है। वह कहता है कि मनुष्य एक राजनीतिक प्राणी है, जो अपने स्वभाव से राजकिय जीवन के लिए बना है। वह अपने स्वभावजन में भौतिक, नैतिक, सांस्कृतिक

क्रायनोनिया ↳ राज्य

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की ओर आकर्षक होता है। इन व्यक्तियों के मेल से परिवार का जन्म होता है और परिवार समाज का निर्माण करते हैं। और समाज से गाँव का निर्धारण होता है, गाँव से मण्डल का और मण्डल से नगर राज्यों का निर्माण होता है। अतः इस तरह एक राज्य का जन्म होता है। राज्य व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

08/22

(ii) राज्य एक स्वभाविक संस्था है -

अरस्तु का मानना है कि राज्य किसी समझौते का परिणाम नहीं है अपितु यह एक प्राकृतिक समुदाय है। अरस्तु राज्य को [कायनोनिया] मानता है अर्थात् ऐसा समुदाय जिसका विकास राज्य के बिना सम्भव नहीं है।

(iii) राज्य सर्वोच्च समुदाय के रूप में -

अरस्तु राज्य को समुदायों का समुदाय ही नहीं अपितु सर्वोच्च समुदाय मानता है। अतः राज्य उसे पूर्ण स्वावलम्बी बनाता है। प्रत्येक अन्य समुदाय का उद्देश्य किसी विशेष एवं निम्नतर शुभ की प्राप्ति करना है। जबकि राज्य का उद्देश्य परम शुभ की प्राप्ति करना है।

(iv) राज्य मनुष्य से पहले :-

अरस्तु का यह भी कहना है कि राज्य मनुष्य से पहले है। सतही तौर पर अरस्तु का यह कथन विचित्र-सा लगता है, क्योंकि व्यक्तियों ने राज्य का निर्माण किया है.

अर्थात् व्यक्ति पहले आता है और राज्य बाद में,

परन्तु अरस्तु ने पहले राज्य की कल्पना की है फिर व्यक्ति।

अरस्तु का तर्क है कि अंश से पहले पूर्ण आता है। अंशपूर्णता एक भाव होता है। अरस्तु यहाँ राज्य को शरीर का रूप देता है एवं व्यक्ति को शरीर का कोई अंग बताता है। अतः इस हिसाब से शरीर पहले आता है और अंग बाद में।

(v) अन्य बिन्दु :-

→ राज्य का आत्मनिर्भर होना।

→ राज्य अन्तिम एवं पूर्ण संस्था होना।

अरस्तु के अनुसार राज्य के कार्य :-

निम्न रूप से है-

(i) उत्तम एवं आनन्दपूर्ण जीवन का निर्माण करना।

(ii) लोगों का सामाजिक एवं आर्थिक, राजनीतिक विकास करना

(iii) शिक्षा सम्बन्धित कार्य करना

(iv) सुरक्षा सम्बन्धित कार्य करना

अरस्तु के राज्य की आलोचनाएं :

कुछ विद्वानों का मानना है कि अरस्तु का आदर्श राज्य प्लेटो का उप-आदर्श राज्य है जो प्लेटो की पुस्तक The Laws में वर्णित है।

अतः अरस्तु ने नकल की है।

(ii) यह केवल नगर राज्य तक ही उपयुक्त है आज के विशाल राज्यों के लिए उपयुक्त नहीं।

(iii) समाज को दास एवं नागरिक के रूप में विभाजित करना अनुपयुक्त है।

निष्कर्ष :-

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अरस्तु ने अपने शिक्षक प्लेटो की विफलताओं से सबक लेते हुए अपेक्षाकृत व्यवहारिक राज्य की स्थापना हेतु चिंतन किया इसी कसौटी पर अरस्तु की राज्य सम्बन्धी अवधारणा को देखना होगा तथा फिर इन आलोचनाओं को नकारा भी नहीं जा सकता।

अरस्तु द्वारा संविधानों का वर्गीकरण :-

अरस्तु ने विभिन्न राज्यों में शासन संचालन को लेकर कई प्रकार की शासन व्यवस्था का वर्णन किया है। यह पहला व्यक्ति है जिसमें शासनकर्ताओं की संख्या व शासन के उद्देश्यों के आधार पर राज्य के संविधानों का वर्णन किया है। संविधानों का अध्ययन आधुनिक राजनीति विज्ञान का महत्वपूर्ण विषय साबित हुआ।

अरस्तु को राजनीति विज्ञान व तुलनात्मक राजनीति का जनक तथा संविधान का जनक कहा जाता है।

संविधानों के वर्गीकरण का परिचय :-

संविधान अरस्तु द्वारा प्रयुक्त शब्द 'पॉलिटिया' है (Politia)। जिसका अंग्रेजी रूपान्तरण Constitution (कॉन्स्टीट्यूशन) है परन्तु पॉलिटिया शब्द English भाव को स्पष्ट नहीं करता है।

अरस्तु द्वारा प्लेटो के स्टेटमैन में किये गये राज्यों के वर्गीकरण को ही अपनाया गया है।

'पॉलिटिक्स' के तीसरे भाग में संविधान का वर्गीकरण किया गया है भाग = 4-6 तक - 158 संविधानों का वर्गीकरण किया गया है।

संविधान की परिभाषा :-

अरस्तु ने संविधानों की व्याख्या दो रूपों में की गई है -

(i) राज्यों के विभिन्न मनुष्यों के जीवन-निर्वाह के विशेष नियम / [राजनीतिक स्वरूप (राज्य)]

(iii) जीवन पद्धति / जीवन निर्वाह का विशेष मार्ग -

→ संविधान राज्य अथवा उसके पदों का संगठन है। संविधान द्वारा ही राज्य की रूपरेखा एवं आकार-प्रकार सुनिश्चित करता है।

→ संविधान ही राज्य तथा लोगों के लक्ष्यों को निश्चित करता है।

→ संविधान ही सर्वोच्च सत्ता को निश्चित करता है। ऐसे प्रश्नों का ही राज्य की सार्वभौम सत्ता एक व्यक्ति कुछ व्यक्तियों अथवा अनेक व्यक्तियों में में निहित है। उत्तर हम राज्य के संविधान के आधार पर दे सकते है।

संविधानों का वर्गीकरण :-

अरस्तु द्वारा संविधानों का सर्वप्रथम वैज्ञानिक वर्गीकरण किया गया।

(i) संख्या (Number) :-

इसमें शासन संचालन सम्बन्धी कार्य कितने व्यक्तियों द्वारा किया जायेगा

(ii) लक्ष्य या उद्देश्य :-

राज्य का लक्ष्य / शासनकर्त्ता का लक्ष्य स्वार्थपूर्ण या निस्वार्थपूर्ण शासन संचालन

Note :- संख्या वाले में एक व्यक्ति का शासन या कुछ व्यक्तियों का शासन या बहुसंख्यकों का शासन होगा तथा दूसरे आधार (लक्ष्य) में दो रूपों में बाँटा गया है। इसे निम्न प्रकार से समझा जा सकता है —

संविधानों का वर्गीकरण।

प्रथम आधार (संख्या) शासन करने वाले व्यक्तियों की संख्या	द्वितीय आधार (लक्ष्य / नैतिक आधार) दो भागों में संचालन का उद्देश्य	
	स्वभाविक रूप	विकृत रूप
एक व्यक्ति	राजतंत्र Monarchy	निरंकुश तंत्र Tyranny
कुछ व्यक्ति	कुलीन तंत्र Aristocracy	वर्गतंत्र या धनिकतंत्र oligarchy
अनेक व्यक्ति या बहुसंख्यक	मर्यादित प्रजातंत्र या बहुतंत्र Polity	भीड़तंत्र या प्रजातंत्र Democracy

अरस्तु ने वैज्ञानिक पद्धति तथा आगमनात्मक पद्धति के आधार पर 158 संविधानों का अध्ययन किया है। अरस्तु ने बताया कि शासन परिवर्तन का चक्र होता है और उसी चक्र के आधार पर संविधानों का वर्गीकरण होता जाता है। अरस्तु बताता है कि प्रारम्भ में राजतंत्र होता है अर्थात् एक व्यक्ति का शासन होता है और कुछ समय बाद में ये व्यक्ति स्वार्थी व लालची हो जाता है और बाद में उसका विरोध होने लगता है तथा शासन कुछ कुलीन व्यक्तियों के हाथ में आ जाता है और कुछ समय बाद ये लोग भी अपना स्वार्थ देखने लग जाते हैं और उसके बाद शासन धनिकतंत्र रूप में परिवर्तित हो जाता है और यह धनिक तंत्र भी अपने

स्वार्थों की पूर्ति में लग जाता है। इसके बाद इन शासन कर्त्ताओं में प्रजा के कुछ अधिक लोग शामिल हो जाते हैं। अर्थात् वे लोग भी भ्रष्ट हो जाते हैं और शासन सत्ता प्रजा के कुछ लोगों में आ जाते हैं और समयान्तर ये लोग भी भ्रष्ट हो जाते हैं इसके बाद इनके विरुद्ध एक व्यक्ति द्वारा संघर्ष के लिए प्रयास किया जाता है और सभी लोगों का शासन तंत्र स्थापित हो गया अर्थात् लोकतंत्र या भीड़तंत्र स्थापित हो गया। और इस शासन में एक व्यक्ति प्रमुख हो जाता है और इसी तरह से परिणामस्वरूप वह राज्यतंत्र में बदल जाता है और इसी तरह से एक चक्र बन जाता है और यह चक्र चलता ही रहता है।

आलोचना :-

अरस्तु के वर्गीकरण की आलोचना कई आधारों पर की जाती है -

सिनक्लेयर " अरस्तु के वर्गीकरण की कोई व्यवहारिक उपयोगिता नहीं है क्योंकि उसने अपना वर्गीकरण संविधानों के व्यवहारिक पक्ष के आधार पर नहीं किया

बर्गेस के अनुसार -" अरस्तु के संविधानों का वर्गीकरण आध्यात्मिक है संख्यात्मक नहीं "

मोटेतौर पर अरस्तु के वर्गीकरण की निम्न तर्कों के आधार पर आलोचना की जाती है +

(i) प्रजातंत्र को उचित स्थान नहीं दिया :-

अरस्तु द्वारा प्रजातंत्र को उचित स्थान नहीं दिया गया अरस्तु प्रजातंत्र को भीड़तंत्र का पर्यायवाची मानता है परन्तु व्यवहार में देखा जाए तो प्रजातंत्र सर्वश्रेष्ठ शासन

पद्धति समझा जाता है।

(ii) मौलिकता का अभाव :-

आलोचकों ने अरस्तु द्वारा प्रतिपादित वर्गीकरण में मौलिकता का अभाव पाया जाता है क्योंकि उसने इस सन्दर्भ में अपने गुरु की नकल की है लेकिन केवल अंतर इतना ही है कि प्लेटो के संवैधानिक प्रजातंत्र के स्थान पर भीड़तंत्र का मान दिया है

प्लेटो ने वर्गीकरण का आधार - और संख्या को बनाया है वो अरस्तु ने उसमें आर्थिक तत्व को और जोड़ दिया.

(iii) अरस्तु का वर्गीकरण आधुनिक राज्यों पर खरा नहीं उतरता :-

आलोचकों का यह भी आरोप कि अरस्तु का यह वर्गीकरण आधुनिक राज्यों पर खरा नहीं उतरता। उनका कहना है कि अरस्तु ने अपने समय के नगर राज्यों को ध्यान में रखकर वर्गीकरण किया परन्तु वह वर्तमान समय में लागू नहीं होता है।

→ व्यवहार में देखा जाए तो अरस्तु की आलोचना नहीं की जा सकती है उस समय की परिस्थितियां काफी अलग थी।

(iv) अरस्तु ने राज्य संविधान और शासन के मध्य का अन्तर स्पष्ट नहीं किया है -

— राजतंत्र

(v) अरस्तु का चक्र त्रुटी -पूर्ण है

(vi) पॉलिटी अच्छी शासन व्यवस्था है यह सामान्य परिस्थितियों में ऐसा नहीं हो सकता है।

अरस्तु के वर्गीकरण का महत्व और प्रभाव :-

अरस्तु द्वारा किया गया वर्गीकरण राजनीति विज्ञान में यह सबसे पहला व्यवस्थित वर्गीकरण था। अरस्तु का वर्गीकरण एक तरह से मार्ग दर्शन बन गया है इसके बाद के विद्वान सरकारों के वर्गीकरण में अरस्तु के द्वारा दिखलाये मार्ग से न तो पूर्णतया अलग हो सकते हैं और न ही उसके प्रभाव से बच सकते हैं। पोलवियस, मैकियावली, बोंदा, मॉण्टेस्क्यू तथा आधुनिक विचारक मेरियट तक ने इस वर्गीकरण से प्रेरणा ली है। उपयोगिता की दृष्टि से भी अरस्तु के वर्गीकरण का महत्व है।

→ अरस्तु की अवधारणाओं के बाद के वर्गीकरण की योजना को स्थायी रूप से प्रभावित किया है।

संक्षेप में अरस्तु का वर्गीकरण ही सर्वप्रथम वैज्ञानिक वर्गीकरण का मार्ग प्रशस्त किया।

अरस्तु का दासता सम्बन्धी विचार :-

अरस्तु के दासता सम्बन्धी विचार उसकी रूढ़िवादिता के प्रमाण है। दास प्रथा यूनानी समाज का आधार थी। यूनान का आर्थिक ढाँचा इस प्रकार का था कि भूमि का स्वामित्व कुलीन परिवारों के हाथ में था जो परिश्रम नहीं कर सकते थे। उत्पादन के लिए उनके अधीन श्रमिकों का एक बड़ा दल परिश्रम करता था क्योंकि उनके परिश्रम से ही सारा देश जीवन जीता था।

दास प्रथा के बारे में अरस्तु ने अपनी पुस्तक पॉलिटिक्स में लिखा है कि " स्वामी केवल दास का स्वामी है, स्वामी उसका दास नहीं है, जबकि दास केवल अपने स्वामी का दास ही नहीं बल्कि पूर्ण रूप से उसी का है जो अपनी प्रकृति से ही अपना नहीं है बल्कि दूसरे का है और फिर भी मनुष्य है वह निश्चय ही स्वभाव से दास है वह दूसरे की सम्पत्ति है या उसका कब्जा है और एक कब्ज़े की परिभाषा यह है कि वह कार्य करने का केवल एक साधन है जो कब्ज़ा करने वाले से पृथक है।

अरस्तु दास को एक पारिवारिक सम्पत्ति मानता है और दास सजीव सम्पत्ति का उपकरण है।

अरस्तु के दासता सम्बन्धी विचार :-

अरस्तु ने अपने विचारों में दास प्रथा का समर्थन किया है। अरस्तु दास को परिवार का एक महत्वपूर्ण भाग या सम्पत्ति मानता है।

दासता की परिभाषा:-
अरस्तु का मत है कि दासता वह सजीव उपकरण है जो अपने स्वामी के जीवन को सुविधामय बनाकर उसे सद्गुणों से युक्त जीवनयापन में उसकी सहायता करे।
- अरस्तु दास को सम्पत्ति मानता है और कहता है कि सम्पत्ति दो प्रकार की होती है -
↳ चल सम्पत्ति ↳ अचल सम्पत्ति

सम्पत्ति

चल सम्पत्ति	अचल सम्पत्ति
सजीव	निर्जीव
(दास, जानवर आदि)	(मकान, ज़मीन, सोना व अन्य जैवरात संबंधी)

दास प्रथा का आधार :-
(i) दास प्रथा एक स्वभाविक व्यवस्था है -
अरस्तु के मत अनुसार दास प्रथा प्राकृतिक है प्रकृति ने मनुष्य को मोटे रूप से दो समूह में बाँटा है जिनकी आत्माओं में प्रकृति शासन करने व आज्ञा मानने का सिद्धान्त जमाया है। जो मनुष्य आज्ञा मानने के लिए पैदा हुआ है वह प्रकृति के दास होते हैं और ऐसे मनुष्यों को अधीनता में रखना न्यायपूर्ण है।

→ अरस्तु कहता है कि विषमता प्रकृति का नियम है कुछ व्यक्ति जन्म से स्वामी तो कुछ अन्य जन्म से दास होते हैं कुछ शासन के लिए पैदा होते हैं तो कुछ शासित होने के लिए। कुछ आज्ञा देने के लिए जन्म लेते हैं और कुछ लोग आज्ञा मानने के लिए। प्रकृति ने जिन्हें स्वामी बनाया

है उनमें बौद्धिक बल और जिन्हें दास बनाया है उनमें शारीरिक बल की प्रधानता होती है

(ii) दास-प्रथा दोनों पक्षों को लाभकारी,
(iii) अरस्तु नैतिक दृष्टि से भी दास-प्रथा को आवश्यक मानता है।

दास प्रथा / दासता के प्रकार :-

दासता

प्राकृतिक दास (स्वभाविक) — Natural Slavery
वैधानिक दास — Legal Slavery

(A) Natural Slavery :- जो व्यक्ति प्राकृतिक रूप से बौद्धिक दृष्टि से कमजोर होते है अर्थात् जो प्रकृति से अपना न होकर दूसरों का होता है। प्राकृतिक दास कहलाता है।

(B) Legal Slavery :- (युद्धबन्दी) अरस्तु के अनुसार ऐसे दास जो युद्ध में पराजीत होने के कारण युद्ध बन्दी के रूप में विजयी द्वारा दास बनाये जाते है अतः वे वैधानिक दास कहलाते है।

दास प्रथा के बारे में अरस्तु द्वारा प्रतिपादित मानविय व्यवस्थाए :-

(i) दास एवं स्वामी के मध्य आत्मा (स्वामी), व शरीर (दास) का संबंध है अतः दोनों में मित्रता व सम्भावना होनी चाहिए

(ii) स्वामी दास का चारित्रिक विकास करे तथा स्वामी को दास के समस्त परिस्थितियां उपलब्ध करवाये जिनसे वह श्रेष्ठ नागरिक बन सके।

(iii) स्वामी दास को ऐसे आदर्श देवे जिनकी पालना दास कर सके - आदर्श पालना कैसे की जाए उनका प्रशिक्षण भी देवे।

(iv) स्वामी अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं करे:- अरस्तु यह भी कहता है कि स्वामी द्वारा प्राकृतिक दास के साथ मैत्रीपूर्ण आचरण करना चाहिए यदि दास में विवेक की स्थापना हो जाती है अर्थात् बुद्धि और विवेक का विकास हो जाता है तो उसे मुक्त कर दिया जाए।

(v) यदि दास का विवेक सम्पन्न है तो उसे दास न बनाया जाए।

→ अरस्तु ने अपनी वसीयत में ~~कहा~~ यहां तक लिखा है कि उसके किसी दास को बेचा न जाए एवं उनमें से कुछ को उचित आयु का होने पर मुक्त कर दिया जाए। इससे स्पष्ट होता है कि वह दासों के प्रति मानविय समर्थक तथा क्रूर व्यवहार का विरोधी है।

आलोचना :-

अरस्तु द्वारा प्रतिपादित दासता सम्बन्धित सिद्धान्त पूर्ण रूप से त्रुटियों से भरा हुआ है तथा आलोचकों द्वारा इन्हें अमानविय संकीर्ण क्रूर, युनानी पूर्वाग्रहों से युक्त की संज्ञा दी है।

आलोचकों का यह मानना है कि दासता सम्बन्धी सिद्धान्त समानता व स्वतंत्रता के सिद्धान्तों के प्रतिकूल है। अरस्तु की दासता सम्बन्धी धारणा

की आलोचना निम्न आधार पर की जा सकती है,

(i) दासता अप्राकृतिक :-

दास प्रथा प्रकृति के विरुद्ध है मनुष्य में बौद्धिक व शारीरिक विविधताएँ होने के बावजूद भी प्राकृतिक समानता होती है अर्थात सभी लोग प्रकृति के समक्ष समान है साथ ही आलोचकों का यह भी मानना है कि बौद्धिक आधार पर हम उन्हें दास नहीं घोषित कर सकते है,

(ii) मानव समुह का विभाजन सम्भव नहीं -

आलोचकों का मानना है कि दासता का जो विभाजन किया गया है वह पूर्ण रूप से भेदभाव पूर्ण है अर्थात इसमें दो वर्ग बाँट दिये गये हैं उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग का व्यक्ति दास होगा अतः आलोचकों ने इसकी गम्भीर आलोचना करते हैं।

(iii) विरोधाभास से परिपूर्ण धारणा :-

अरस्तु का दासता सम्बन्धी सिद्धान्त विरोधाभासी है एक ओर तो अरस्तु राज्य का उद्देश्य मनुष्य को श्रेष्ठ जीवन प्रदान करने को कहता है तथा दूसरी ओर बुद्धिहिन कहकर वह उन्हें दास बनाकर श्रेष्ठ जीवन देने से रोकता है। अतः यह धारणा विरोधाभासी है

(iv) सौद्धश्यता सिद्धान्त के प्रतिकुल :-

आलोचकों का मानना है कि दासता सम्बन्धी सिद्धान्त उनके सौद्धेश्य सिद्धान्त के विरुद्ध है क्योंकि इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का जीवन किसी न किसी श्रेष्ठ उद्देश्य की उपलब्धि

के लिए होता है अर्थात् अच्छाई प्राप्त करने की दासता की जंजीरों में पकड़े जाने पर व्यक्ति अपने में निहित विकास की क्षमता का मात्र भी उपयोग नहीं कर सकता है।

निष्कर्ष :-

अतः कहा जा सकता है कि अरस्तु का दास प्रथा अवैज्ञानिक, अमानवीय आचरण तथा प्रकृति के विरुद्ध है।

इनन्सटीन ने लिखा है कि "उसकी दासता सम्बन्धी स्वीकृति यह सिद्ध करती है कि किस प्रकार एक बुद्धिमान और महान दार्शनिक अपने समय की संस्थाओं का और उन पक्षपातों का बन्दी होता है जो उन संस्थाओं को तर्क द्वारा औचित्यपूर्ण बतलाती है।

अरस्तु का नागरिकता सम्बन्धी विचार

अरस्तु का नागरिक सिद्धान्त :-

अरस्तु ने अपने नागरिकता सम्बन्धी विचारों को नकारात्मक रूप से प्रारम्भ करता है उसका मानना है कि केवल राज्य में निवास के कारण अथवा किसी नागरिक की सन्तान होने के नाते अथवा कुछ कानूनी अधिकारों की प्राप्ति के आधार पर नागरिकता प्राप्त हो जाती है।

अरस्तु नागरिकता की परिभाषा देते हुए कहता है कि नागरिक वह व्यक्ति होता है जो राज्य के न्यायिक प्रशासन के कार्यों में अथवा सभा के सदस्य के रूप में विधि - निर्माण के कार्यों में भाग लेता है।

⇒ उसने किसी मनुष्य के राज्य में निवास करते हुए नागरिक न होने की निम्न दशाएँ बतायी है -

(i) राज्य के किसी स्थान विशेष में निवास करने मात्र से नागरिकता नहीं मिल सकती क्योंकि स्त्री, बच्चे, दास और विदेशी जिस राज्य में रहते है उन्हें वहा का नागरिक नहीं माना जाता है

(ii) किसी पर अभियोग चलाने का अधिकार रखने वाले व्यक्ति को भी नागरिक नहीं माना जा सकता है क्योंकि संधि द्वारा यह अधिकार विदेशियों को भी दे दिया गया।

(iii) उन व्यक्तियों को नागरिक नहीं माना जा सकता जिनके माता -पिता किसी दुसरे राज्य के नागरिक है क्योंकि ऐसा करने से हम नागरिकता निर्धारण के किसी सिद्धान्त का निर्माण

नहीं कर सकते है
(iv) निष्कासित तथा मताधिकार से वंचित व्यक्ति भी राज्य के नागरिक नहीं हो सकते है

→ अरस्तु द्वारा श्रमिकों और दासों को नागरिकता की परिधि से बाहर रखने के कारणों को स्पष्ट करते हुए यह तर्क दिया गया है कि नागरिकता एक विशेष गुण है जिसके लिए विशेष योग्यता की आवश्यकता होती है। नीति निर्धारण और कार्यों में भाग लेने के लिए एक उच्च नैतिक व बौद्धिक स्तर की आवश्यकता होती है यह गुण प्रत्येक निवासी में नहीं पाया जाता है। स्त्रियों, बालकों, दासों, मिस्त्रियों या श्रमिकों के पास शासन करने और राजनीतिक कार्यों में भाग लेने लायक नैतिक और बौद्धिक स्तर नहीं होता है इस कारण अरस्तु ने इन लोगों को नागरिकता प्रदान नहीं की है।

अरस्तु ने नागरिकता में महिलाओं को दूर किया अर्थात् महिलाओं को नागरिकता से वंचित किया गया है।

नागरिकता की प्रमुख विशेषताए / लक्षण :-

(i) व्यक्ति में शासन करने की योग्यता के साथ ही शासित होने का गुण भी होना चाहिए अर्थात् उसे सद्गुणी होना चाहिए।

(ii) नागरिक होने के लिए व्यक्तिगत सम्पत्ति का होना आवश्यक है।

(iii) नागरिक होने के लिए नैतिक एवं बौद्धिक योग्यताएँ भी होनी चाहिए अर्थात् उसे सद्गुणी होना चाहिए।

(iv) राज्य कार्यों में रुचि वाले को ही नागरिक बनाया जाना चाहिए।

नागरिकता की प्रकृति संविधान की प्रकृति पर निर्भर :-

राजतंत्र, निरंकुशतंत्र, कुलीनतंत्र, अल्पतंत्र आदि में नागरिकता के लिए जो गुण व योग्यताओं को स्वीकारी जाएगी एवं परस्पर विभिन्न होगी, सभी संविधान अपनी आवश्यकतानुसार ही नागरिकता का अधिकार देना चाहते हैं।

सीमित नागरिकता का पक्षधर :-

अरस्तु राज्य में निवास करने वाले सभी व्यक्तियों को नागरिकता देने का समर्थन है जो उसकी दृष्टि में नागरिकता कार्यों को सक्षम करने में समर्थ हैं। अरस्तु का कथन है नागरिकता का अर्थ राजनीतिक अधिकारों और कर्तव्यों से है।

आलोचना एवं सीमाएँ :-

(i) आधुनिक प्रजातंत्र पर लागु न होना :-

अरस्तु द्वारा नागरिकता की परिभाषा आधुनिक प्रजातंत्र पर सही नहीं बैठती है आज का युग अप्रत्यक्ष प्रजातंत्र का युग है सभी नागरिक न तो विधि निर्माण के कार्य में भाग ले सकते है और न ही प्रशासन के कार्य में भाग ले सकते हैं,

(ii) स्त्रियों को नागरिकता से वंचित करना :-

अरस्तु का कथन है कि स्त्रियाँ बचपन से ही अपने माता-पिता पर निर्भर

रहती है यदि सेवा करती है तो मालिक पर निर्भर हो जाती है और शादी के पश्चात् पति पर आश्रित हो जाती है। वे किसी न किसी पर निर्भर होती है इसलिए उन्हें नागरिकता का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। यहाँ प्रश्न उठता है कि यदि कोई स्त्री पर निर्भर ना हो और अच्छी सम्पत्ति की स्वामिनी भी हो तो उसको नागरिकता क्यों नहीं दी जाती है.

(iii) अनेक वर्गों व गुटों का उदय :-

अरस्तु की नागरिकता की धारणा को अपनाने से राज्य में अनेक वर्गों और गुटों का निर्माण हो जाएगा और शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना सम्भव नहीं होगा।

(iv) बड़े राज्यों के लिए अनुपयुक्त :-

अरस्तु का चिंतन नगर राज्यों के लिए समान रूप से था चूंकि वह नागरिकों को प्रत्यक्ष रूप से शासन में हिस्सा दिलवाना चाहता है जो लघु नगर-राज्यों में ही सम्भव था किन्तु आज के विशाल प्रतिनिधिक राज्यों ने उसका नागरिकता सिद्धान्त एकदम अनुपयुक्त है।

<u>निष्कर्ष</u> :-

संक्षेप में अरस्तु के नागरिकता सिद्धान्त में अरस्तु की प्राचीन युनानी नगर राज्यों की यथार्थवादी पक्ष का वर्णन मिलता है किन्तु जहाँ तक औद्योगिक युग का सम्बन्ध है। अरस्तु की अवधारणा में अनेक कमियां है और उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता।

अरस्तु के क्रान्ति सम्बन्धी विचार

अरस्तु ने पॉलिटिक्स की 5वीं पुस्तक में क्रान्तियों का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए उनके कारणों पर प्रकाश डाला है तथा उनके समाधान करने के महत्वपूर्ण उपाय सुझाए हैं। अरस्तु के ~~समयमम~~ करने के महत्वपूर्ण में यूनान के राज्यों के स्वरूप एवं संविधानों में शीघ्र परिवर्तन होने लगे थे यह अस्थिरता और नित्य नई परिवर्तनशीलता यूनानी जीवन की सबसे बड़ी विशेषता बन चुकी थी यहाँ के राज्य विभिन्न शासन प्रणालियों - राजतंत्र, धनिकतंत्र, जनतंत्र, निरंकुश तंत्र आदि में से गुजर चुका था।

गैटिल का कहना है - पॉलिटिक्स राजनीतिक दर्शन का क्रमबद्ध अध्ययन ही नहीं वरन शासन की कला पर एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसमें अरस्तु द्वारा यूनानी नगर राज्यों में प्रचलित बुराइयों और उनके राजनीतिक संगठन के दोषों का विवेचन किया गया है और ऐसे व्यवहारिक सुझाव दिये गये हैं जिनसे आपत्तिजनक भयों का निराकरण किया जा सके।

अरस्तु के अनुसार क्रान्ति का अंत :-

अरस्तु की क्रान्ति सम्बन्धी धारणा वर्तमान क्रान्ति सम्बन्धी धारणा से भिन्न है। उसके अनुसार किसी राज्य में जनता या जनता के किसी भाग द्वारा सशस्त्र विद्रोह का नाम भी क्रान्ति नहीं है उसके अनुसार क्रान्ति का अर्थ है संविधान में हर छोटा - बड़ा परिवर्तन। यह आवश्यक नहीं है कि संविधान में प्रणेता

परिवर्तन होता है या आंशिक सशस्त्र होता है या बिना किसी घटना के। संविधान में पूर्ण परिवर्तन के परिणामस्वरूप राज्य का सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक और प्रशासनिक स्वरूप पूर्णतः परिवर्तन हो जाता है तो उसे हम पूर्ण क्रान्ति की संज्ञा दे सकते है।

किन्तु जब संविधान के कुछ भाग में परिवर्तन होता है तब हम उसे आंशिक क्रान्ति की संज्ञा दे सकते है।

क्रान्ति के प्रकार :-

(i) आंशिक और पूर्ण क्रान्ति :-

यदि सम्पूर्ण संविधान बदल दिया जाए तो पूर्ण क्रान्ति है और जब केवल कोई परिवर्तन महत्वपूर्ण भाग को बदला जाता है तो आंशिक क्रान्ति कहलायेगी।

(ii) रक्तपूर्ण व रक्तहीन क्रान्ति :-

सशस्त्र विद्रोह एवं रक्तपात द्वारा किये जाने वाला संविधान में परिवर्तन रक्तपूर्ण क्रान्ति है अन्यथा उसे रक्तहीन क्रान्ति कहा जाता है।

(iii) व्यक्तिगत और गैर-व्यक्तिगत क्रान्ति :-

जब किसी महत्वपूर्ण क्रान्ति को हटाकर संविधान में परिवर्तन किया जाए तो वह व्यक्तिगत क्रान्ति है अन्यथा शासक के बिना बदले संविधान में किये जाने वाला परिवर्तन गैर-व्यक्तिगत क्रान्ति होगी।

(iv) वर्ग विशेष के विरुद्ध क्रांति :-
धनिकतंत्र या किसी अन्य वर्ग विशेष विरुद्ध क्रान्ति करके किये जाने वाला संवैधानिक परिवर्तन इस प्रकार की क्रान्ति की कोटी में आयेगा।

(v) वैचारिक क्रान्ति :-
जब किसी राज्य में कुछ वक्तागण अपने भाषणों या ______ द्वारा राज्य में क्रान्ति ला दे तो इसे वैचारिक क्रान्ति कहा जाता है।

क्रान्ति के कारण :-
(i) क्रान्तियों का मूल कारण :-
अरस्तु क्रान्ति का मुख्य कारण समानता को मानता है यह समानता दो प्रकार की होती है संख्यात्मक समानता व योग्यता सम्बन्धी समानता। अरस्तु का अभिप्राय आनुपातिक समानता से है।

अरस्तु का मत है कि सभी लोग इस बात से सहमत हो जाए कि निरपेक्ष न्याय योग्यता के अनुपात में होना चाहिए किन्तु व्यवहार में योग्यता के प्रश्न पर मतभेद है वे सोचते है कि जब मनुष्य की दृष्टि से सब समान है तो फिर अधिकारों, धन-सम्पदा आदि में विषमता क्यों वहाँ भी समानता होनी चाहिए। जन वर्ग सदा अपनी समानता दूसरों से करता है और उसके पास अधिकार अधिक होने पर विषमता या असंतोष की भावना उत्पन्न होने लगती है और यह विकराल होकर क्रान्ति का रूप धर लेता है।

वास्तव में क्रान्ति का सबसे बड़ा कारण न्याय का यह एकांगी दूषित दृष्टिकोण है जब सभी जनता का कोई भाग यह अनुभव करता है कि उसके साथ अन्याय हो रहा है वहीं से क्रान्ति का बीजारोपण हो जाता है।

सामान्य कारण :-

(i) सम्मान की लालसा
(ii) श्रेष्ठता की भावना
(iii) घृणा और परस्पर विरोधी विचारधाराएं
(iv) भय
(v) द्वेष - भावना
(vi) जातियों की विभिन्नता
(vii) शासक वर्ग की असावधानियाँ
(viii) पारिवारिक विवाद

क्रान्तियों से बचने के उपाय :-

अरस्तु ने राज्य क्रान्ति के कारणों पर व्यापक प्रकाश डालने के साथ -2 क्रान्तियों को रोकने के उपायों पर भी प्रकाश डाला है.

मैक्सी " आधुनिक राजनीतिक विचारक शायद ही क्रान्ति को रोकने का अरस्तु के उपायों के अतिरिक्त कोई अन्य ठोस उपाय बता सके "

प्रमुख उपाय निम्न हैं -

(i) शक्ति पर नियंत्रण
(ii) आर्थिक असमानता कम करना
(iii) जनता में संविधानों के प्रति आस्था बनाये रखना
(iv) समाज में मध्यम वर्ग को बढ़ावा देना।
(v) युद्ध का भय दिखाना (सुरक्षात्मक कारण)
(vi) धनोपार्जन की भावना का दमन करना।

अतः कहा जा सकता है कि अरस्तु द्वारा क्रान्तियों को बहुत व्यापक तरह से स्पष्ट किया है साथ ही क्रांति के मूल कारण में समानता को कारण बताकर व्यवहारिक स्थिति का रूप प्रदर्शित किया है तथा साथ ही उस समय प्रचलित क्रांति के रूप में स्पष्ट किया गया है।

अरस्तु और प्लेटो

यूनान में राजनीति का प्रचार का महत्वपूर्ण कार्य अरस्तु तथा प्लेटो द्वारा किया गया है प्लेटो अपने इस महान शिष्य को अपनी अकादमी का मस्तिष्क कहा करता था।

फोस्टर :-

"अरस्तु अपनी प्लेटोवादियों में महान है"

सेबाइन :-

इसके बाद दार्शनिक लेखों का प्रत्येक पृष्ठ इस सम्बन्ध में गवाह है।"

प्लेटो व अरस्तु के बीच समानताए व असमानताए:-

समानताए :-

(i) राज्य एक स्वभाविक समुदाय :-

दोनों राज्य को मनुष्य के लिए एक स्वभाविक संस्था मानते थे जो मनुष्य के जीवन को पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है और जिससे बाहर देवता या पशु ही रह सकते है।

(ii) राज्य नैतिक समुदाय :-

दोनों राज्य को मनुष्य के एक लिए नैतिक समुदाय मानते है जिसका मूल उद्देश्य मानव जीवन को नैतिक रूप से उत्कृष्ट बनाता है

(iii) राज्य का आत्मनिर्भर रूप :-

इन दोनों के अनुसार राज्य एक आत्मनिर्भर समुदाय है राज्य को अपनी प्रत्येक आवश्यकता को स्वयं पुरा करना चाहिए उसे किसी भी आवश्यकता के लिए अन्य संस्था पर निर्भर नहीं रखना चाहिए

(iv) मनुष्य एक राजनीतिक प्राणी :-

दोनो ने मनुष्य को एक राजनीतिक प्राणी माना है जिसका पूर्ण विकास राज्य की क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने से ही सम्भव हो सकता है।

(v) शासन एक कला :-

दोनों ने शासन को एक प्रकार से कला माना है जिसको प्रत्येक व्यक्ति सीख नहीं सकता है। अतः शासन करने का अधिकार समाज में कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के हाथ में ही होना चाहिए। ये दोनों विचारक जनतंत्र को शासन का एक निकृष्ट रूप समझते है

(vi) शिक्षा का महत्व :-

दोनों ने ही एक समुचित शिक्षा के महत्व पर बल दिया है दोनो का ही यह विश्वास था कि राज्य का निर्माण पाठशालाओं

में ही होता है अतः दोनों ने ही राज्य द्वारा नियंत्रित प्रणाली अरस्तु की है, जिसमें एक विशेष प्रकार के पाठ्यक्रम की व्यवस्था की गयी है।

असमानताए : (i) आदर्शवाद तथा यथार्थवाद :-
प्लेटो एक महान आदर्शवादी था जबकि अरस्तु यथार्थवादी था। प्लेटो वस्तुओं की वास्तविकता उनके स्थूल रूप में नहीं बल्कि उनके विचारों में देखता है इसके विपरित अरस्तु एक यथार्थवादी है वह जीवन की वास्तविकताओं की उपेक्षा नहीं करता है बल्कि उनसे सुझते है और जीवन को अधिक सुन्दर बनाने का प्रयास या सुझाव देता है वह वस्तुओं को उनके स्थूल रूप में ही वास्तविकता मानता है और उनमें अन्तर्निहित विचारों के चक्कर में नहीं पड़ता।
अरस्तु ने प्लेटो की भाँति किसी स्वप्नलोक की कल्पना नहीं की उसकी 'पॉलिटिक्स' तो व्यवहारिक राजनीतिज्ञों के लिए निर्देश पत्रिका का काम करती है।
दोनों दार्शनिकों के अन्तर को स्पष्ट करते हुए डनिंग कहता है कि प्लेटो कल्पनावादी और सुश्लेषणवादी है। अरस्तु एक तथ्यवादी और विश्लेषणवादी है

(ii) पद्धतियों का अन्तर :-
प्लेटो की पद्धति निगमनात्मक है वह ज्ञान, सद्, शुभ, न्याय इत्यादि के विषय में कुछ पूर्व मान्यताओं से आरम्भ करके उनसे कुछ विशेष परिणाम निकलता है उसकी पद्धति मे कल्पना का अंश कम और विश्लेषण अधिक है

(iii) राजनीतिशास्त्र व नीति शास्त्र के सम्बन्ध का अंतर :

प्लेटो ने राजनीतिक विचारों तथा नैतिक सिद्धान्तों को सवर्था एकरूप मानता है उसने राजनीति शासन तथा नीतिशास्त्र में कोई भेद नहीं किया परन्तु अरस्तु ने राजनीतिशास्त्र से अलग करके राजनीति के नविन व स्वतंत्र विज्ञान को जन्म दिया।

(iv) शासन व शासन व्यवस्था का अन्तर :-

प्लेटो अपनी उन्मुक्त कल्पना की उड़ान भरते हुए दार्शनिक राजाओं के शासन की व्यवस्था करता है जो कि समस्त कानून तथा प्रयासों और परम्पराओं के समस्त बन्धनों से सवर्था मुक्त होंगे। उसके विपरित अरस्तु एक शासन व्यवस्था को सर्वोत्तम मानता है जिसमें सभी नागरिक राजनीतिक जीवन में यथोचित भाग ले सके।

(v) सम्पत्ति एवं परिवार :-

प्लेटो के सामाजिक संगठन में आमुलचुल परिवर्तन करने का प्रयास किया उसने हमारे समक्ष सम्पत्ति तथा पत्नियों के साम्यवाद की विलक्षण व्याख्या प्रस्तुत की है कि अरस्तु एक यथार्थवादी है और इसलिए वह समाज की सुप्रतिष्ठित परम्पराओं तथा व्यवस्थाओं पर कुठाराघात नहीं करता वह व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा व्यक्तिगत परिवार को न केवल कायम रखता है वरन् उनके महत्व और पर्याप्त बल भी देता है।

(vi) शैलियों में अन्तर :-

प्लेटो की शैली में हम महान काव्यात्मक सौन्दर्य देखते हैं उसमें असीम माधुर्य है और वह समन्वयात्मक है परन्तु अरस्तु की प्रकृति

वैज्ञानिक होने के कारण उसकी शैली तथ्यात्मक तथा विश्लेषणात्मक है उसमें उपमाओं व रूपकों का वह वैभव वह माधुर्य वह शब्द झलकार कहा जिसने कि रिपब्लिक को संसार का एक महानतम ग्रंथ बना दिया है.

निष्कर्ष :-

प्लेटो तथा अरस्तु के बीच भेद को सारांश मैक्सी के इन शब्दों में दिया जा सकता है - प्लेटो आदर्शवादी राजनीतिक दार्शनिकों, स्वप्नदृष्टाओं, क्रान्तिकारियों तथा कल्पनावादियों का जनक है और अरस्तु यथार्थवादियों, वैज्ञानिकों, व्यवहारवादियों तथा उपयोगितावादियों का पिता है।

Section - B मैकियावली

Question: मैकियावली प्रथम आधुनिक राजनीतिक चिंतक वैज्ञानिक था ? समझाइए।

Answer: मैकयावली इटली के फ्लोरेन्स का निवासी था। प्रारम्भ में उसने लिपिक के रूप में कार्य किया एवं उसके बाद में वह कई बार अलग-2 राज्यों का राजदूत भी बनाया गया।

आधुनिक राजनीति चिन्तन के इतिहास में मैकयावली एक दार्शनिक, एक प्रवेश्क, एक सिद्धान्तकार के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

→ मैकयावली को प्रथम आधुनिक राजनीतिक विचारक मैक्सी ने कहा था। मैक्सी ने तीन आधारों पर मैकयावली को प्रथम आधुनिक राजनीतिक चिंतक कहा है -

(i) सामंतवाद (ii) पोपतंत्र (iii) पवित्र रोमन साम्राज्य

↑ ↑ ↑

मध्य युग / अन्धकार युग

मैकयावली ने इन तीनों की कड़ी आलोचना की। जिससे आधुनिक युग की शुरूआत हुई। इसी कारण मैक्सी ने मैकयावली को प्रथम आधुनिक राजनीतिक विचारक कहा।

कोकर ने दो कारणों से मैकयावली को प्रथम आधुनिक चिन्तक कहा —

(i) मैकयावली ने अपने लेखन के लिए प्रमाण एवं उदाहरण धार्मिक ग्रंथों के बजाय ऐतिहासिक ग्रंथों से जुटाए है।

(ii) मैकयावली ने राजनैतिक मुद्दों एवं धार्मिक मुद्दों को अलग किया।

• राजनीति का नैतिकता से पृथक्करण :-

प्राचीन समय में अरस्तु ने राजनीति विज्ञान को नीतिशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र को अलग कर स्वतंत्र विषय के रूप में मान्यता दिलाई, इसी तरह मैकयावली ने राजनीति विज्ञान को नैतिकता एवं धार्मिक शास्त्र से अलग किया।

(ii) नविन अध्ययन पद्धति :-

मैकयावली के पहले के मध्यकाल के विचारकों ने निम्न निगमनात्मक और धार्मिक पद्धति का अध्ययन किया जबकि मैकयावली ने आगमनात्मक व ऐतिहासिक पद्धति को अपनाया। मैकयावली अनुभव, प्रवेक्षण एवं तुलनात्मक आधार बनाकर अपने ग्रंथों की रचना की।

(iii) राज्य को राजनीति विज्ञान का केन्द्रीय विषय माना जाता है। आधुनिक युग में राज्य के महत्व को दिखाने वाला प्रथम प्रमुख विचारक मैकयावली है। ["State" – बार्कर]

(iv) मैकयावली के दर्शन में आधुनिक व्यक्तिवाद के तत्व भी मिलते है। उसमें शासक को सलाह दी गई है कि वह प्रजा के धन का अपहरण न करे और व्यापार व वाणिज्य में हस्तक्षेप ना करे।

(v) मैकयावली ने धर्म को राज्य द्वारा नियंत्रित करने का विचार किया है जबकि पहले धर्म राज्य को नियंत्रित करता था।

(vi) सम्प्रभुता आधुनिक राजनीति विज्ञान की एक प्रमुख अवधारणा है और MV के दर्शन में इसके तत्व दिखाई देते है।

Question:- मैकियावली के धर्म एवं नैतिकता सम्बन्धी विचार बताइए।

Answer:- मैकियावली अपने राज्य इटली का एकीकरण करना चाहता था। उसके लिए उसने मानव स्वभाव के आधार पर शासन व्यवस्था का निर्माण किया। उसने मानव स्वभाव को आधार माना।

उसने कहा कि यदि मानव का स्वभाव सरल सहयोगात्मक एवं आदर्शी है तो उसके लिए गणतांत्रिक व्यवस्था उपयुक्त रहेगी।

परन्तु इटली के लोगों का मानव स्वभाव स्वार्थी, झगड़ालू एवं भय से प्रेरित था यदि मनुष्य किसी से प्रेम करता है तो उसके पीछे भी उसका भय या स्वार्थ छिपा हुआ है।

अतः शासक के लिए यह उचित है वह मनुष्यों को डरा कर रखे एवं समय-2 पर उचित प्रलोभन दे।

मैकियावली के अनुसार मनुष्य के स्वभाव की अन्य विशेषता सम्पत्ति के प्रति लगाव है। मैकियावली के शब्दों में " मनुष्य अपने पिता की मृत्यु को भूल जाता है लेकिन वह अपनी पैतृक सम्पत्ति को नहीं भूल पाता।"

मैकियावली के विचार की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि उसने राजनीति से धर्म एवं नैतिकता का पृथक्करण किया है अर्थात् शासक राष्ट्रपति के अनुसार धर्म एवं नैतिकता का पालन कर सकता है।

मैकियावली के नैतिकता सम्बन्धी विचार :-

मैकियावली शासन में नैतिकता को उपयुक्त स्थान देते है।

वे नैतिकता को दो भागों में बाँटते हैं -

नैतिकता

व्यक्तिगत	सार्वभौमिक /सामाजिक
• व्यक्तिगत नैतिकता राजा /शासक के लिए है जिसमें शासक अपने राष्ट्रहितों के आधार पर नैतिकता का पालन करता है। • राजा को नैतिकता का दिखावा करना चाहिए। • राजा जनता को ऐसा प्रतित करवाये कि वह व्यक्ति का कल्याण कर रहा है। अगर जनता उसके विरुद्ध क्राँति कर दे तो राजा को चाहिए कि वह सेना द्वारा उस विद्रोह को कुचला दे	• सार्वजनिक नैतिकता जनता के लिए होती है जिसमें जनता का कर्त्तव्य है कि वह शासन के प्रति आस्था बनाये रखे। • जनता राजा के विरुद्ध क्रांति ना करे।

धर्म सम्बन्धी विचार :-

मैकियावली तत्कालिन समय में धार्मिक विचारों का खण्डन करता है। मध्ययुग में धर्म को पारलौकिक सुख / मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया था। और धर्म को एक अनुशासन के रूप में प्रयुक्त किया जाता था।

मैकियावली धर्म का वहाँ तक ही समर्थन करता था जहाँ तक वह राज्य के उद्देश्य की पूर्ति करता है।

मैकियावली धर्म को एक साधन के रूप में मानता है।

धर्म —
- → शान्ति व्यवस्था
- → यश व गौरव की क्रान्ति
- → विस्तार

राजा को धर्म का इस्तेमाल सावधानीपूर्वक करना चाहिए चाहे राजा अधार्मिक हो पर सार्वजनिक स्थानों पर उसे धर्म ढोंग करना चाहिए।

धर्म विरोधी कारण :-
पोप व चर्च के अधिकारियों द्वारा धर्म के माध्यम से शोषण करते हुए मैकियावली ने देखा। उन्होंने धर्म के माध्यम से इटली के लोगों को बेवकूफ़ बनाया।

धर्म सम्बन्धी आलोचना :-
मैकियावली ने धर्म की जो धारणा दी है वह त्रुटिपूर्ण है उसने धर्म को एक साधन बताया जबकि धर्म तो साध्य है जहाँ व्यक्ति को शान्ति की प्राप्ति होती है।
(ii) मैकियावली ने चर्च को ही धर्म माना वास्तव में दोनों बहुत अलग है। धर्म एक साध्य है जबकि चर्च उसकी प्राप्ति का साधन

Q. हॉब्स के सामाजिक सिद्धान्त को समझाइए व आलोचनात्मक व्याख्या करो।

हॉब्स का जन्म इंग्लैण्ड में हुआ था। हॉब्स को आधुनिक राजनीतिक वैज्ञानिक विचारक कहा जाता है। क्योंकि इन्होंने तत्कालिन समय में प्रथाओं, परम्पराओं को नकार कर वैज्ञानिक भौतिकवाद अध्ययन की शुरुआत की।

हॉब्स की प्रमुख पुस्तके :-

(i) लेवियाथन
(ii) D. सिवे
(iii) D. कारपोरे
(iv) एलीमेंट्स ऑफ लॉ
(v) पेलोपोनेशियन युद्ध

अध्ययन पद्धति :-

आगमनात्मक वैज्ञानिकवाद / वैज्ञानिक भौतिकवाद

वैज्ञानिकता का अर्थ :- इस शब्द का अर्थ है व्यवहारिक व्याख्या, कार्यकारण सम्बन्ध और निष्कर्ष निकालने की प्रवृत्ति।

भौतिकवाद का अर्थ :-

वास्तविक वस्तु जगत का अध्ययन अर्थात् धार्मिक अन्धविश्वासों, नैतिकता एवं ईश्वर में अविश्वास।

20/02/22

हॉब्स का सामान्य समझौता सिद्धान्त :-

राज्य व्यक्ति के लिए क्यों आवश्यक है? व्यक्ति ने किन कारणों से राज्य की स्थापना की है? राज्य व्यक्ति के जीवन में क्या भूमिका अदा करता है?

इसके लिए हॉब्स ने राज्य उत्पत्ति के बारे में बताया है।

उत्पत्ति		
प्राचीन	प्लेटो, अरस्तु	→ जैविक / प्राकृतिक
मध्यकाल	एक्विन्यास, आगस्टाइन	→ दैविय सिद्धान्त
आधुनिक	हॉब्स, लॉक, रूसो	→ सामाजिक समझौता

हॉब्स ने राज्य की उत्पत्ति के सिद्धान्त के सम्बन्ध में ब्रिटिश शासन व्यवस्था का अध्ययन किया।
हॉब्स ने राज्य उत्पत्ति के सम्बन्ध में वैज्ञानिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।
हॉब्स ने सामाजिक ~~सि ६~~ समझौते सिद्धान्त को निम्न स्वरूपों में देख सकते है -

(i) मानव स्वभाव का स्वरूप :-
हॉब्स मनुष्य को स्वार्थी, झगडालू, विवेकहिन, घृणित, ईर्ष्यालु माना।

हॉब्स के अनुसार मनुष्य में वस्तुओं के प्रति आकर्षण एवं विकर्षण पाया जाता है। वस्तुओं का आकर्षण इच्छाओं को जन्म देता है। और किसी वस्तु के प्रति विकर्षण करता है। अतः मनुष्य के लिए अच्छा या बुरा होना उसकी इच्छा पर निर्भर करता है और प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए सदैव लगा रहता है

(ii) प्राकृतिक अवस्था :-
हॉब्स ने इस अवस्था को अराजकतावादी अवस्था कहा है। जिसमें लगातार युद्ध की स्थिति रहती है अर्थात् व्यक्ति अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए युद्ध करते रहते हैं। अतः यहां

मत्स्य न्याय पाया जाता है अर्थात् जिसकी लाठी उसकी भैंस।

इस अवस्था में मनुष्य का जीवन एकाकी निर्धन, उत्साही व पशुमूल्य होता है। एकांकी इसलिए कि उसको न तो परिवार होता है और न कोई मित्र।

इस अवस्था में वाणिज्य, व्यवसाय एवं अन्य सांसारिक वस्तुओं का उदय नहीं हुआ था। इस अवस्था में व्यक्ति पशुओं को मारकर अपना भोजन करता था।

(iii) प्राकृतिक कानून :-

इसमें हॉब्स प्राकृतिक अधिकार एवं कानून की बात भी करता है।

प्राकृतिक अधिकार से तात्पर्य - व्यक्ति को अपने जीवन का संरक्षण करने का अधिकार है। यदि कोई व्यक्ति उसके जीवन को समाप्त करने की कोशिश करे तो वह उस सामने वाले को मार देता है

प्राकृतिक कारण - मनुष्य की इस अवस्था में अपनी सुरक्षा के लिए कुछ प्राकृतिक कानून थे। (i) प्रत्येक मनुष्य शान्ति की खोज करता रहे।

(ii) सभी मनुष्य अपने प्राकृतिक अधिकारों का परित्याग करे।

(iii) प्रत्येक मनुष्य को अपने वचन का पालन करना चाहिए।

समझौते के कारण :-

(i) प्राकृतिक अवस्था में अशान्ति,

अव्यवस्था और असुरक्षा की स्थिति ।
(ii) प्राकृतिक अवस्था में प्राकृतिक कानूनों को लागू करने वाली कोई संस्था नहीं थी।
(iii) लगातार समाज में अराजकता की स्थिति बढ़ रही थी। अतः उससे लोगों ने यह महसूस किया कि कोई ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए, जो समाज में एक आदर्श राज्य की स्थापना कर सके, जहाँ असुरक्षा, अशान्ति और हिंसा का वातावरण न हो।

सामाजिक समझौते द्वारा राज्य की उत्पत्ति :-
प्राकृतिक अवस्था में अराजकता की स्थिति से छुटकारा पाने के लिए सभी मनुष्यों ने मिलकर एक समझौता किया। प्रत्येक मनुष्य ने शपथ ली कि प्रत्येक व्यक्ति या समूह समय या स्वयं पर शासन करने का परित्याग करता है और यह कहता है कि तुम्हें भी अपने अधिकारों का परित्याग करना होगा।
अतः शासन का अधिकार लेवियाथन को सौंप दिया। हॉब्स ने सम्प्रभुता की शक्ति लेवियाथन को सौंप दी। अर्थात् लेवियाथन को अत्याधिक शक्तियाँ (अफ़सलुट शक्तियाँ) दी गई।

हॉब्स ने क्रांति के बारे में कोई बात नहीं की, परन्तु यह कहा कि जब राजा व्यक्ति के आत्म-सुरक्षा अधिकार को छिनेगा तब वह राज्य का विरोध कर सकता है।

हॉब्स के सामाजिक ~~सिद्ध~~ समझौते सिद्धान्त की आलोचना :-
हॉब्स द्वारा सामाजिक समझौते सिद्धान्त

की आलोचना का मुख्य आधार निम्न प्रकार से है –

(i) मानव स्वभाव का त्रुटिपूर्ण चित्रण :-

हॉब्स द्वारा किया गया मानव स्वभाव का चित्रण एकांगी व त्रुटिपूर्ण है। वह मनुष्य को झगड़ालू, स्वार्थी व लोभी मानता है, किन्तु यह मानव स्वभाव का एक पहलू है। मनुष्य में कुछ बुरी प्रवृत्तियों के साथ-2 अच्छी प्रवृत्तियाँ भी विद्यमान रहती हैं।

झगड़ा ↔ स्नेह व प्रेम

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है वह सब के साथ मिलकर रहना चाहता है, एकाकी नहीं।

(ii) प्राकृतिक अवस्था का गलत चित्रण :-

हॉब्स ने 'लेवियाथन' में राज्य की उत्पत्ति से पूर्व की जिस प्राकृतिक अवस्था का वर्णन किया है वह काल्पनिक है।

(iii) निरंकुश सम्प्रभुता का विचार अनुचित :-

हॉब्स ने निरंकुश सम्प्रभुता का समर्थन करते हुए सम्पूर्ण शक्तियाँ राजा को ही सौंप दी है। वह मानता है कि प्राकृतिक अवस्था की अराजकता को समाप्त करने के लिए लोगों ने सम्प्रभु को सारे अधिकार सौंप दिए उस पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखा तथा उसकी (राजा) आज्ञा को मानना अनिवार्य समझा। इस प्रकार हॉब्स का विचार निरंकुशवाद को बढ़ावा देता है।

(iv) राज्य का आधार समझौता नहीं :-

हॉब्स यह मानता है कि राज्य किसी समय हुए समझौते का परिणाम है।

अतः अब भी उसकी आज्ञाओं का पालन होना चाहिए
आलोचकों का कहना है कि हम राज्य की आज्ञा का पालन इसलिए नहीं करते कि हमारे पूर्वजों ने ऐसा समझौता किया है, बल्कि इसलिए करते हैं क्योंकि ऐसा करना हमारे हित में है,
अतः राज्य का आधार उसकी उपयोगिता है, कोई समझौता नहीं।

(v) अतार्किक सिद्धान्त :-
किसी भी समझौते के लिए दो पक्षों का होना अनिवार्य है किन्तु हॉब्स द्वारा जिस समझौता का वर्णन किया है तथा इसमें केवल एक ही पक्ष है जनता।
अतः यह समझौता अतार्किक है।

निष्कर्ष :-
हॉब्स के सामाजिक समझौता सिद्धान्त व प्रकृति आदि की आलोचना करने के बाद राजनैतिक दृष्टि से इसका बहुमत महत्व है।
हॉब्स ने सर्वप्रथम राजनैतिक अध्ययन में वैज्ञानिक अध्ययन, चिन्तन तथा तर्क बुद्धि का समावेश किया है।
हॉब्स ने यह प्रतिपादित किया कि राज्य ईश्वरीय कृत नहीं, अपितु मानवीकृत इकाई है।
हॉब्स ने राज्य को कृत्रिम संस्था न मानकर मानव स्वभाव की उपज मानते हुए प्राकृतिक संस्था माना है।

कार्ल - मार्क्स

Question

Answer:- 1844 before — **Karl Marx** — 1844 After

1844 before	1844 After
Young Marx	Mature Marx
Humentarian thought	Classical Marx
↳ अलगाव की संकल्पना (Theory of Alienation)	Dialectical Materialism
	Historical Materialism
↳ Concept of freedom →	Equality
↳ आत्मप्रेरित व्यवहार (Concept of Praxis)	Theory of class Conflict. (Concept of class Consciousness)
	Theory of Surplus Value.
followers - Neo Marxist	followers - orthodox
He was a philosopher	He was a politician
only man, idealist, Democratic + Liberty	only class, Scientific, Revolutionary, Equality
पूँजीवाद के मनोवैज्ञानिक कुप्रभाव	पूँजीवाद के आर्थिक कुप्रभाव
↳ राईनिश पत्रिका का सम्पादन	ट्राटस्की, कार्ल ट्राटस्की, रोजालमग्जबर्ग, माओ
↳ आलोचनात्मक मार्क्सवाद	

→ वैज्ञानिक / क्रांतिकारी समाजवाद →
मार्क्सवादी समाजवाद -

मार्क्स ने वर्ग-संघर्ष को ऐतिहासिक तथ्य के रूप में स्थापित कामगार वर्ग + सर्वहारा वर्ग को क्रांति के लिए प्रेरित किया है।
→ इतिहास की भौतिकवादी संकल्पना और अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त, वैज्ञानिक समाजवाद की आधारशिला है और क्रांति के बाद एक समाजवाद का आदर्श रूप साम्यवाद स्थापित किया जाएगा जहाँ पर वर्ग-विहिन व राज्य-विहिन समाज की स्थापना होगी।
↳ अपने इस स्वरूप को उसने वैज्ञानिक समाजवाद कहा। उसने वैज्ञानिक की तरह प्रारम्भ से अंत तक सम्पूर्ण व्यवस्थित तथा क्रमबद्ध किया है।

→ कार्ल मार्क्स ने समाजवाद को एक व्यवस्थित तथा सैद्धान्तिक रूप में स्थापित करने का काम किया है और समाजवाद → आदर्श स्थिति → साम्यवाद का जिक्र किया है।
अतः उसने यह काम वैज्ञानिक की भाँति किया है इस कारण उसने स्वयं को वैज्ञानिक कहा है उसने अपने चिंतन को वैज्ञानिक समाजवाद कहा है।

- मार्क्सवाद :-
मार्क्सवाद उन राजनीतिक व आर्थिक सिद्धान्तों का समुच्च है जिन्हें 19वी-20वी शताब्दी में कार्ल-मार्क्स और उसके अनुयायियों ने समाजवाद के वैज्ञानिक आधार की पुष्टि के लिए प्रस्तुत किया है।

टेलर ने बाइबिल व कुरान की भाँति पवित्र बताया है।

मार्क्सवाद की स्थापना :- "The Communist Manifesto" के अन्तर्गत Communism या साम्यवाद शब्द का प्रयोग समाजवाद के विशेष रूप का संकेत देने के लिए किया गया था।

Communism मार्क्स व एंजेल्स का विचार था कि पहले कामगार वर्ग के अन्दर चेतना का उदय होगा फिर वह अपना राजनीतिक संगठन बनाकर पूँजीपतियों के विरुद्ध क्रांति करेगा।

NOTE :- यह चेतना सर्वप्रथम मजदूर वर्ग में आयेगी

जब सर्वहारा वर्ग संगठित होकर क्रांति के द्वारा पूँजीवादी व्यवस्था को धाराशाही करके उत्पादन के प्रमुख साधनों पर सामाजिक स्वामित्व स्थापित कर देता है।

(राज्य रहता है परन्तु Power (सत्ता) सर्वहारा वर्ग के पास चली जाती है)

→ सर्वहारा वर्ग इस सत्ता का प्रयोग वह पूँजीपति (बुर्जुवा) वर्ग के दमन के लिए करता है।

(First phase of Communist Society) ↳ इसे सर्वहारा वर्ग का अधिनायक तंत्र कहा जाता है।

यहाँ पुराने शोषक समाज को मिटाने की पुरी कोशिश की जाती है।

↳ इसके अंतिम स्वरूप में वर्ग भेद पूर्णतः समाप्त हो जाता है तथा राज्य भी समाप्त हो जाता है इसी अवस्था को साम्यवाद के नाम से जाना जाता है।

Higher phase of Communist Society (साम्यवाद → वर्गविहिन + राज्यविहिन समाज)

↳

इस समय उत्पादन की शक्तियाँ पूर्णतः विकसित हो जाती है और सभी को रोजगार मिल जाता है।

लेनिन -

"हर एक को अपनी क्षमता के अनुसार तथा हरेक को अपनी आवश्यकतानुसार"

NOTE :- शासन संचालन किस प्रकार होगा इस बारे में मार्क्स ने नहीं बताया → बाकि सभी को लेनिन माओ ने बताया है।

साम्यवाद की आलोचना :-

(A) साम्यवाद की विडम्बना यह है कि स्वप्नदर्शी समाजवाद का खंडन करके एक नये स्वप्न लोक की रचना कर डाली।

→ कार्ल मैन्हरिम के अनुसार मार्क्स के चिंतन से जुड़े साम्यवादी समाज को स्वप्नलोक की संज्ञा दी है।

(B) सोवियत रूप में साम्यवादी व्यवस्था के नाम पर सारे विशेषाधिकार कम्युनिस्ट पार्टी के उच्च अधिकारियों ने सम्भाल लिया और संवेदनशील एवं भ्रष्ट अधिकारतंत्र के चलते जनसाधारण फिर दयनिय अवस्था में पहुँच जाता है (विनोलवन विलास)

(C) वेपर के अनुसार - "उन्होंने स्वप्नलोकिय समाजवादी गुलाब की कल्पना तो कि लेकिन उसके लिए जमीन तैयार नहीं की।"

(D) कामगार वर्ग इस क्रांति का साध्य नहीं रहा बल्कि साधन मात्र रह गया है।

साम्यवाद और समाजवाद - तुलनात्मक अध्ययन

विषय	समाजवाद	साम्यवाद
उत्पादन के प्रमुख साधनों की स्थिति	सामाजिक स्वामित्व	सामाजिक स्वामित्व
राजनीतिक व्यवस्था	सर्वहारा का अधिनायकतंत्र	वर्गविहिन, राज्य विहिन समाज
श्रम की स्थिति	सब स्वस्थ व्यक्तियों के लिए अनिवार्य	सब स्वस्थ व्यक्तियों के लिए अनिवार्य
उत्पादन की शक्तियों की स्थिति	पूर्ण विकास की ओर	पूर्णतः विकसित
अधिकारों की स्थिति	हर एक को अपनी क्षमता अनुसार, हर एक को अपने कार्यानुसार	हरेक की अपनी क्षमता के अनुसार हरएक को अपनी आवश्यकतानुसार

अल्थ्यूसर - युवा मार्क्स तथा प्रौढ़ मार्क्स दोनों अलग - 2 है।

मैकम्लेन - युवा मार्क्स व प्रौढ़ मार्क्स दोनों समान है।

कार्ल मार्क्स Marxism

– दार्शनिकों ने केवल विभिन्न तरिकों से दुनिया की व्याख्या की मुख्य बात उसे बदलने हुए की थी :मार्क्स

→ मानविय चेतना उसके सामाजिक अस्तित्व का निर्धारण नहीं करती अपितु उसका सामाजिक अस्तित्व उसकी चेतना का निर्धारण करता है मार्क्स

वेपर → द्वन्द्ववाद की धारणा अत्यंत कठिन व अस्पष्ट है

मार्क्सवाद – लेनिनवाद से 'युग का भ्रम' कहा है

केर्यु हण्ट – समाजशास्त्र के सभी आधुनिक लेखक मार्क्स के प्रति ऋणी है – किन्तु वे स्वीकार नहीं करते।

* केटलीन " मार्क्स का वर्ग संघर्ष सिद्धान्त ही आधुनिक कष्टों रोगों व यहाँ तक की फांसीवाद का जन्मदाता है।"

केर्यु हण्ट – मार्क्स का अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त किसी भी रूप में मूल्य का सिद्धान्त नहीं है बल्कि वास्तव में वह शोषण का सिद्धान्त है

सेनाइन – अतिरिक्त मुल्य का सिद्धान्त प्रतिदिन अर्थशास्त्रियों के श्रम सिद्धान्त का विस्तार मात्र है।"

मैक्स वीयर –

उस विचार को स्वीकारना असम्भव है कि मार्क्स का सिद्धान्त आर्थिक सत्य के स्थान पर राजनैतिक व सामाजिक नारेबाजी है।

लुई वासरमैन – मार्क्स ने साम्यवाद को एक षड्यंत्र के रूप में पाया व उसे एक आन्दोलन के रूप में छोड़ा।

जॉन वारक्लिफ – राजतंत्रवादी साम्यवादी
सेबाइन – मार्क्स के द्वन्दात्मक भौतिकवाद को नैतिक स्वच्छंदतावाद कहा।
हेलोवर्थ – हम मार्क्स के कार्यक्रम को अनदेखा कर सकते हैं पर उसने पूँजीवाद के विरुद्ध जो आरोप लगाया है उसकी उपेक्षा हम नहीं कर सकते।

सर्वहारा का अधिनायकवाद शब्द में मार्क्स ने अधिनायकवाद शब्द जनरल लुई युजिन कावाइना से लिया है।
मार्क्स सर्वहारा वर्ग को पूँजीवाद का कब्रिस्तान मानता है।
कोटस्लर – मार्क्स ऐसा ईश्वर था जिसने निरशक्रिया
कीटस्की को मार्क्सवाद का पोप कहा जाता है।
बर्न्सटीन – " सर्वहारा के अधिनायकवाद को अराजकतावादी बताया।
जॉन लुईस – मार्क्सवाद मानववाद का उच्चतम विकास है
फ्रांसिस फुकुयामा : मार्क्स द्वारा प्रतिपादित ऐतिहासिक भौतिकवाद कूड़ेदान में चला गया।

Works of Karl Marx :-

(i) Critique of Hegal's philosophy of Right – 1843
- The Holi family – 1845
- The Poverty of Philosophy 1847
- The Communist Manifesto 1848
- Value, Price, Profit – 1865
- The Civil War in france – 1870-71
- The Gotha Programme

- Class strugle in France
- Das Capital

A Contribution to the Critique of Political economy after Death → VOL – 1st 1867
VOL – 2nd 1885] Angles
VOL – 3rd – 1894]

- Economical and philosophical Manuscript 1844 (This book and time divided Marx young and mature marx.)

→ Grondrisse – 1857
→ पत्रिका – राईनिश

* Communist league – 19..
England
↳ by Marx – अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक वर्ग समुदाय 1864
(London

मार्क्स के प्रमुख सिद्धान्त :-
1. द्वन्दात्मक भौतिकवाद
2. वर्ग संघर्ष
3. ऐतिहासिक भौतिकवाद या आर्थिक निर्धारणवाद
4. अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त
5. वर्ग चेतना का सिद्धान्त
6. अलगाववाद की संकल्पना
7. स्वतंत्रता का सिद्धान्त
8. आत्मप्रेरित व्यवहार की संकल्पना
9. क्रांति का सिद्धान्त
10. सर्वहारा वर्ग का तानाशाही
11. आदर्श साम्यवादी व्यवस्था
12. राज्य पर विचार
13. धर्म पर विचार
14. राष्ट्रवाद पर विचार

संसार में परिवर्तन कैसे होते हैं।

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद Dialectical Materialism

Dialectical Materialism] History of Society
Historical Materialism]

↓ Realistic View

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद शब्द coined by जार्जी- प्लेखनोव

→ द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का सिद्धान्त मार्क्सवाद का दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है। यह द्वन्द्वात्मक पद्धति तथा भौतिकवाद को मिलाकर सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या प्रस्तुत करता है

दर्शनशास्त्र की एक उपशाखा तत्व मीमांसा (Metaphysics) है जिसकी एक उपशाखा सत्तामीमांसा (ontology) है जिसमें इस प्रश्न पर विचार किया जाता है कि सृष्टि का सार तत्व क्या है ?

'सृष्टि का सार तत्व'

- आध्यात्मवाद
  - ↓ आत्मा (Sprit)
  - चेतना (Idea)
  - G.W.F. हेगल
- भौतिकवाद
  - ↓ जड़ पदार्थ

हेगल ने सामाजिक परिवर्तन के लिए द्वन्द्वात्मक सिद्धान्त का प्रयोग किया है उसने माना कि इस सृष्टि की उत्पत्ति का कारण चेतना है और सामाजिक परिवर्तन भी चेतना के कारण होगा इसलिए उसने इतिहास की व्याख्या के लिए द्वन्द्वात्मक पद्धति का प्रयोग किया है।

Dialectical Method →

Thesis → Anti Thesis → Synthsis

Argument → Counter Argument → Conclusion

वाद - प्रतिवाद
संवाद

Thesis
Antithesis

जिसमें एक वाद - प्रतिवाद अर्थात् - चेतना के विकास की प्रक्रिया में जो विचार सत्य से पिछड़ा हुआ है। उसे अपने विरोधी विचार से चुनौति का सामना करना पड़ता है और यह टकराव तब तक जारी रहता है जब तक पूर्ण सत्य तक ना पहुँच जाये अर्थात् → Nation State

↳ मूर्त रूप

में देखे तो सामाजिक संस्थाओं के उदय एवं विकास के रूप में देखने को मिलता है।

→ मार्क्स यहां चेतना की जगह भौतिकवाद की बात करता है। मार्क्स का मानना है कि चेतना स्वयं जड़ पदार्थ में ही पायी जाती है और इसी से उत्पन्न होती है।

↳ मूर्त रूप (मनुष्यों का सामाजिक - अस्तित्व चेतना पर आधारित नहीं होता है बल्कि चेतना स्वयं उसके सामाजिक अस्तित्व पर आधारित होती है। और यह वाद - प्रतिवाद तथा संवाद की प्रक्रिया वर्गविहिन - राज्यहीन समाज पर जाकर रुकती है।

↳ उत्पादन प्रणालियों का विकास - जड़ तत्व का विकास

↳ जड़ तत्व के अंत:विरोधों का मतलब - वर्ग संघर्ष की अभिव्यक्ति

↳ वाद - पूँजीवाद

↳ प्रतिवाद - सर्वहारा वर्ग का अधिनायकतंत्र

↳ संवाद साम्यवाद

Anti During एंजेल्स - द्वन्द्वात्मक पद्धति में 3 प्रकार के द्वन्द्व पाये जाते हैं

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के तीन बुनियादी नियम हैं (मुख्य)

① Transformation of quanity to quality
(मात्रात्मक से गुणात्मक)
↳ पानी का बर्फ बन जाता है
↳ मात्रा - जिसे मापा और गिना जा सकता → समाज
(उत्पादन के साधनों पर कब्जे के बदले फिर किस गुण / गुण आयेगा)
जैसे 100 करोड़ का मालिक एक है, उसके under 99 काम कर रहे हैं यदि सभी को मात्रा के समान कर दिया जाये तो गुण बदल जाएगा।

② Unity of opposite → परस्पर विरोधी गुण / तत्व आपस में जुड़े रहते हैं - कमल → कोमलता
लोहा → कठोर

[दो विरोधी तत्व एक जगह ही पाए जाएंगे] → लोहा - कठोर + मुलायम (मुलायम)
कमल - कोमलता + कठोर

समाज - दास → मालिक → दास
- सामन्त → सामन्त → किसान
- पूँजीवाद → पूँजीपति → मजदूर

③ Negotion of Nagation :-
वाद - प्रतिवाद - संवाद का चक्र चलता ही रहता है। गेहूं का दाना - वाद
• अंकुर होकर बड़ा होना - प्रतिवाद
• बड़ा होता है - संवाद
फिर से यही चक्र चलता रहता है।

वाद → प्रतिवाद
संवाद
↙
वाद → प्रतिवाद
संवाद to be continue

In short → द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, मार्क्सवाद की आधारशिला है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद सामाजिक परिवर्तन का सिद्धान्त है जिसमें द्वन्द्वात्मक शब्द परिवर्तन की प्रक्रिया को दिखाता है
जबकि भौतिकवाद शब्द सृष्टि के मूल तत्व पदार्थ का सूचक है

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के अनुसार यह जगत प्राणी अपूर्ण है लेकिन उसे पूर्ण बनाना है अतः पूर्णतः की प्राप्ति के लिए जगत निरन्तर परिवर्तनशील है।
परिवर्तन सदैव निरन्तर से उच्चतर की ओर होता है अर्थात बाद की अवस्था पहले की अवस्था से अधिक अच्छी होगी।
परिवर्तन में पाये का मूल कारण व्यवस्था में पाये जाने वाला अन्त विरोध है।
द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के अनुसार संसार का विकास त्रिस्तरिय प्रक्रिया के रूप में होता है -

(A) वाद (B) प्रतिवाद (C) संवाद

वाद प्रारम्भिक अवस्था है। वाद में ही अन्तर्विरोध निहित होता है जिसे प्रतिवाद कहते है। वाद व प्रतिवाद एक-दूसरे के विरोधी होते है जिसके कारण उनमें संघर्ष होता है
'जिससे एक नई अवस्था संवाद उत्पन्न होती है संवाद वाद से बेहतर है क्योंकि उसमें उसके अन्तः विरोधो का समाधान है लेकिन यह पूर्ण नहीं है इसलिए यह एक नया वाद बन जाता है।
↳ वाद - प्रतिवाद व संवाद का यह क्रम तब तक चलता है जब तक आदर्श साम्यवादी समाज की स्थापना ना हो जाये आदर्श साम्यवादी समाज

सभी प्रकार के अन्त: विरोधो से मुक्त होता है।
→ यह स्थायी व अपरिवर्तनशील प्रक्रिया है

आलोचना :-

(i) द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का सिद्धान्त आत्म विरोधी है क्योंकि जगत को निरन्तर परिवर्तनशील मानता है लेकिन आदर्श साम्यवादी अवस्था स्थायी व अपरिवर्तनशील मानता है।

(ii) भौतिकवाद होने के कारण मार्क्स ईश्वर व पारलौकिकता का विरोध करते हैं जिससे व्यवहार में भौतिकतावाद व उपभोक्तावाद को बढ़ावा मिलेगा और समाज के सामने नैतिकता की समस्या उत्पन्न होगी।

निष्कर्ष :-

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का सिद्धान्त तार्किक दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है और इसके द्वारा सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या सही तरीके से नहीं की गयी है।

वर्तमान समय में यह केवल इस रूप में महत्वपूर्ण है कि यह मार्क्सवाद का दार्शनिक आधार है

हैगल - मार्क्स का तुलनात्मक अध्ययन

विषय	हैगल	मार्क्स
दार्शनिक आधार	चेतनावाद	जड़ पदार्थ (भौतिकवाद)
विकास की प्रकृति	द्वन्द्वात्मक चेतनावाद	द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद
प्रगति का माध्यम	राष्ट्रों का संघर्ष (जर्मनी)	वर्गों का संघर्ष (साम्यवाद) — द्वन्द्व बन्द हो जाएगा
विकास का चरम लक्ष्य	राष्ट्र-राज्य का वर्चस्व	वर्ग विहिन, राज्यविहिन समाज

कार्ल मार्क्स - पदार्थ प्राथमिक व चेतना द्वितीय है.

Critic of Political economy : सामाजिक अस्तित्व चेतना का निर्धारण करता है ना कि चेतना सामाजिक अस्तित्व का निर्धारण करती है.

ऐतिहासिक भौतिकवाद या आर्थिक निर्धारणवाद :-

जब द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के दार्शनिक सिद्धान्त का प्रयोग मानव-समाज की ऐतिहासिक विकास की व्याख्या करने के लिए किया जाता है तो उसे भौतिकवाद सिद्धान्त कहते हैं। इस प्रकार द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद सिद्धान्त है जबकि ऐतिहासिक भौतिकतावाद उसका व्यवहारिक रूप है इसे आर्थिक निर्धारणवाद भी कहते हैं।

[समाज]

- आधार Base
  - ↳ उत्पादन
    - उत्पादन प्रणाली
      - उत्पादन के साधन — यंत्र + उपकरण।
      - कामशक्ति — मानवीय श्रम + निपुणताएं
    - उत्पादन संबंध
      - सामाजिक विन्यास
      - परस्पर विरोधी वर्ग
- अधिरचना Superstructure
  - कानूनी, राजनीतिक, धार्मिक विचारधारा, आदर्श, संस्कृति कला etc.

* दास प्रथा समाज - स्वामी + दास
* सामन्ति समाज - जमींदार + किसान
* पूंजीवाद - पूंजीपति + कामगार

उत्पादन प्रणाली :-

↳ उत्पादन प्रणाली —
- उत्पादन के साधन - यंत्र, औजार
- उत्पादन की शक्तियाँ - साधन + श्रम (मानव)

उत्पादन के संबंध :-

उत्पादन की प्रक्रिया के दौरान विभिन्न वर्गों के बीच बनने वाले संबंध मार्क्स के अनुसार शोषण मुक्त होते हैं

↳ इतिहास के किसी भी युग में समाज के आर्थिक संबंध समाज की प्रगति का रास्ता तैयार करते हैं और वे

राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, कानूनी और नैतिक संबंधों का स्वरूप निर्धारित करने में सबसे बढ़कर प्रभाव डालते हैं।
आधार + अधिरचना।

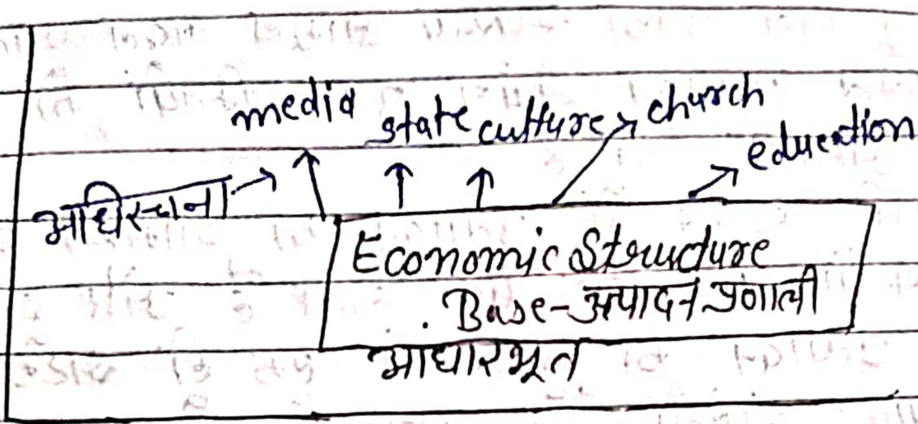

आधारभूत रचना ही अधिरचना का स्वरूप तय करती है अर्थात् जो वर्ग उत्पादन प्रणाली पर नियंत्रण करता है वही वर्ग कानून संविधान आदि अधिरचना को नियंत्रित करता है अतः जब उत्पादन प्रणाली में बदलाव होता है तो वैसे ही अधिरचना बाकि सब हिस्सों में भी परिवर्तन हो जाता है।

→ जब उत्पादन संबंध उत्पादन की शक्तियों को सम्भाल नहीं पाता तब उत्पादन की शक्तियाँ वर्तमान सामाजिक संरचना को तोड़कर नवीन सामाजिक संरचना का निर्माण करती हैं।

→ मार्क्स ने ऐतिहासिक भौतिकवाद के आधार पर मानव समाज के ऐतिहासिक विकास की व्याख्या करते हुए 5 चरण बताये हैं -

1. आदिम अवस्था - इसमें निजि सम्पत्ति, वर्ग विभाजन, राज्य का अभाव था
2. प्राचीन अवस्था - स्वामी / दास
3. सामन्तवादी अवस्था - जमींदार / कृषक / Guild System

(4) पूँजीपति अवस्था - पूँजीपति (बुर्जुआ) / मजदूर (सर्वहारा)
(5) साम्यवादी अवस्था - सर्वहारा वर्ग की तानाशाही, निजी सम्पत्ति, वर्ग, राज्य का अभाव

उत्पादन की शक्तियों का विकास धीरे-2 होता है परन्तु जब उनका स्वरूप आमूल बदल जाता है तब प्रचलित उत्पादन संबंध उन शक्तियों को सम्भालने में असमर्थ होते हैं

ऐसी हालत में उत्पादन की शक्तियों और उत्पादन सम्बन्धों में संघर्ष पैदा होता है और इसी संघर्ष में उत्पादन की शक्तियाँ एक ही झटके से उत्पादन संबंधों के जाल को तोड़कर नए उत्पादन सम्बन्ध (सामाजिक संरचना) को जन्म देती है

यही कारण है कि ऐतिहासिक विकास के क्रम में प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन के लिए क्रांति अनिवार्य है

आलोचना :-

(i) यह सिद्धान्त आर्थिक तत्व पर आवश्यकता से अत्यधिक बल देता है परन्तु सम्पूर्ण इतिहास की व्याख्या केवल आर्थिक आधार पर नहीं हो सकती है -
जैसे - युद्ध, आक्रमण, भारत का विभाजन

(ii) आर्थिक शक्ति सभी प्रकार की शक्तियों का स्रोत नहीं है जैसा कि मार्क्स मानता है कि भारतीय वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मणों की स्थिति, यूरोप में पोप की स्थिति आर्थिक व्याख्या के आधार पर नहीं की जा सकती

निष्कर्ष :-

इस प्रकार आर्थिक निर्धारणवाद का सिद्धान्त तार्किक दृष्टि से सही नहीं है लेकिन यह इस रूप में अवश्य महत्वपूर्ण है कि इसमे सामाजिक घटनाओं के पीछे आर्थिक कारक के महत्व को उजागर किया है।

आज भी अधिकांश सामाजिक परिवर्तनों के पीछे आर्थिक कारक ही प्रमुख घटक है।

Question- कार्ल मार्क्स के वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त को समझाइए।

Answer:- [Theory of class Conflict]

कार्ल मार्क्स ने मार्क्सवाद के अन्तर्गत वर्ग-संघर्ष का सिद्धान्त ऐतिहासिक भौतिकतावाद का पूरक सिद्धान्त है। 'कम्युनिस्ट मैनीफैस्टो' समाज का अब तक का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास रहा है।

वर्ग-संघर्ष का अर्थ, शोषक वर्ग तथा शोषित वर्ग के बीच होने वाला संघर्ष।

मार्क्स के अनुसार वर्ग से तात्पर्य व्यक्तियों के ऐसे समूह से है जो उत्पादन प्रणाली में समान स्थान रखते हो।

→ वर्ग की उत्पत्ति निजी ~~सम्पत्ति~~ सम्पत्ति के कारण होती है। निजी सम्पत्ति के कारण कुछ व्यक्ति उत्पादन के सधन रूप में स्वामी की तरह जुड़े हुए होते है और उत्पादन प्रणाली में उनका विशेष स्थान होता है, वे शोषक वर्ग कहलाते है।

दूसरी तरफ वे व्यक्ति होते हैं जिनके पास निजी सम्पत्ति नहीं होती। वे केवल अपना श्रम बेचते हैं वे शोषित वर्ग कहलाते हैं

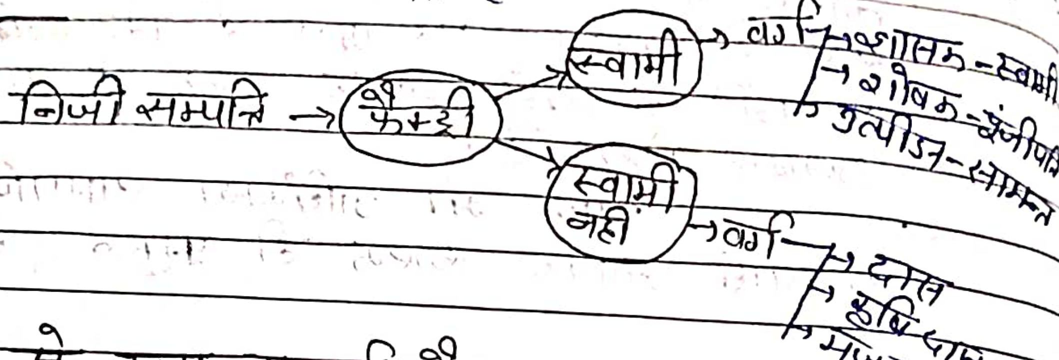

Q. वर्ग से क्या तात्पर्य है इसका वर्णन आगे है।

मार्क्स के अनुसार समाज की सभी दशाओं में इन दोनों में संघर्ष होता रहता है।

आदिम
प्राचीन - आधुनिक में भी
सामन्त

* मार्क्स द्वारा वर्ग - संघर्ष की व्याख्या ऑगस्टिन थेरी से ली गई है।

"अराजकता अस्तित्वमान समस्त समाज का इतिहास वर्ग संघर्षों का इतिहास है" (कम्यूनिस्ट मैनिफेस्टो 1848)
→ वर्ग संघर्ष इतिहास को समझने की कुंजी है
(कार्ल मार्क्स)

मार्क्स के अनुसार आधुनिक अवस्था में वर्ग संघर्ष चरम सीमा पर पहुँच जाता है और पूँजीपति अवस्था समाज के वर्गों का विभेदीकरण अत्यंत स्पष्ट हो जाता है।
→ पूँजी पर आधारित प्रणाली में माल निर्माताओं की निरन्तर प्रतिस्पर्धा के फलस्वरूप सारी पूँजी और ज़मीन धीरे-2 इन गिने-चुने लोगों के पास चली जाती है और मध्यम वर्ग अपने पैरों पर खड़ा न

रहने के कारण कामगार वर्ग में मिल जाता है।
→ सर्वहारा वर्ग अपनी विशाल संख्या और सुदृढ़ संगठन के बल पर पूँजीपतियों को धाराशाही कर देगा है और साम्यवादी (समाजवाद) व्यवस्था की स्थापना करेगी। → इस तरह लुटेरों को लूट लिया जाएगा

NOTE पूँजीवाद को पराजित करने के लिए वह सम्पूर्ण विश्व के कामगारों की एकता का आह्वान करता है इसे मार्क्सवाद का अन्तर्राष्ट्रीय रूप कहा जाता है।
माओ व लेनिन कुछ आगे story Add कर देते हैं
लेनिन - जब समाजवाद की स्थापना होगी तब पूँजीवाद के अंतिम अवशेषों को हटा दिया जाएगा तब वर्ग संघर्ष समाप्त हो जाएगा परन्तु सर्वहारा के नेतृत्व के लिए साम्यवादी दल को अनिश्चित काल के लिए बना दिया जाएगा।

साम्यवादी दल → केन्द्रिय / लोकतांत्रिक केन्द्रवाद
→ संरचना (साम्यवादी पार्टी)

माओ → जब सर्वहारा सत्ता सम्भाल लेगा तब भी अंतर्विरोध का नियम सक्रिय रहेगा जिस पर मनुष्य का अपना वश नहीं होगा।
अतः साम्यवाद के दौर में भी वर्ग-संघर्ष का अंत नहीं हो पाएगा केवल उसका रूप बदल जाएगा
मार्क्स का मानना था कि आर्थिक मोर्चे पर समाजवादी क्रांति हो जाने के बाद समाजवादी व्यवस्था सुदृढ़ नहीं हो पाएगी।
→ इसके लिए सांस्कृतिक, राजनीतिक, शैक्षणिक व विचारधारात्मक मोर्चे पर भी समाजवाद को बढ़ावा और इस कारण माओ निरन्तर क्रांति की बात करता है।

माओ - समाजवादी व्यवस्था में भी मूल्यों और संस्थाओं के स्तर पर सर्वहारा और बुर्जुआ वर्गों का संघर्ष लगातार चलता रहेगा।

आलोचना :-

(i) गाँधी जी के अनुसार सामाजिक जीवन का मूल तत्व संघर्ष नहीं बल्कि सहयोग है।

(ii) यह मानना गलत है कि अब तक की समस्त समाजों का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास रहा है।

(iii) एडुआर्ड बर्नस्टाइन तथा निकोस पुलेंत्साज का मानना है कि मध्य वर्ग समाप्त नहीं होता बल्कि उसका आकार बढ़ता चला जाता है।

निष्कर्ष :-

इस प्रकार मार्क्स के द्वारा प्रतिपादित वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त आज के दौर में प्रासंगिक नहीं रहा है वह केवल इस रूप में उपयोगी है कि इसका उपयोग मजदूर वर्गों की एकता ~~बढ़ाने~~ बन्द करने के लिए किया जाता है।

वर्ग चेतना की अवधारणा :-
वर्ग चेतना, वर्ग संघर्ष के साथ जुड़ी हुई है।
मार्क्स - द जर्मन आइडियोलॉजी :-
वर्ग अपने आप में बुर्जुआ समाज की उपज है।
मार्क्स ने द पावर्टी ऑफ फिलोसॉफी में मार्क्स कामगार वर्ग की उत्पत्ति का विवरण दिया है।
आर्थिक परिस्थितियाँ पहले लोगों के झुंड को कामगार बना देती है। पूंजी का प्रभुत्व इस झुंड के लोगों के लिए एक समान परिस्थितियाँ ला देती है। यह झुंड अपने आप में वर्ग का रूप धारण कर लेता है परन्तु अपनी दृष्टि में वर्ग धारण नहीं कर पाता क्योंकि इसमें चेतना का अभाव होता है।

→ चिरसम्मत मार्क्सवाद के अन्तर्गत वर्ग की प विशेषता की पहचान की गई -
(i) इसमें बहुत सारे लोग एक जैसी आर्थिक परिस्थितियों में पहुंच जाते हैं।
(ii) अपनी स्थिति के प्रति सजग तथा शत्रु को पहचानने लगते हैं।
(iii) उनके हितों में समानता आ जाती है।
(iv) शत्रु को ~~समाप्त~~ समाप्त करने के लिए मन में एकता की भावना का उदय होता है।

वर्ग चेतना की उत्पत्ति :-
(i) दास प्रथा प्रणाली के अन्तर्गत दास अपनी ~~सामाजिक~~ सामान्य, आर्थिक स्थिति के प्रति सजग नहीं थे।
(ii) जमींदारों के विरुद्ध कोई छुट-पुट विरोध

तो हुए पर व्यवस्थित नहीं हुआ और किसान अपने -२ जमींदारों के प्रभुत्व के अधीन इधर-२ बिखरे थे

→ पूंजीवाद के अन्तर्गत औद्योगिक उत्पादन की परिस्थितियां यह मांग करती है कि बहुत सारे कारखाने एक-दूसरे के निकट स्थापित किया जाए और कामगार वर्ग अपनी-२ पसंद के कारखाने में काम करने के लिए स्वतंत्र हो → इससे लोग/कामगार शहरों में बस जाते है और उनमें कामगारों की बस्तियाँ बस जाती है। वहां बहुत सारे कामगार मिलकर रहते है अपने सुख-दुःख को बाँटने के लिए तैयार रहते है। जब उनका आपसी मेलजोल बढ़ता है तो सामान्य हित को पहचानने लग जाते है।

→ इस तरह स्वभाव चेतना तक पहुँच जाते है फिर उनमें चेतना आ जाती है। फिर वे संगठन बनाकर अपनी पहचान स्थापित कर लेते है। जिसमें उन्हें इस सामान्य हित कि सिद्धि के लिए संगठन बनाने की प्रेरणा मिलती है वे अपने छोटे-२ मतभेदों को भुला कर एकता के बन्धन में बंध जाते हैं।

इस तरह स्वभावत चेतना तक पहुँच जाते है फिर इनमें में चेतना आ जाती है फिर वे संगठन बनाकर अपनी पहचान स्थापित कर लेते है और फिर क्रांति होती है

क्रांति → समाजवाद → साम्यवाद की स्थापना होती है

लेनिन → कामगार वर्ग में अपने आप तो केवल मजदूर संघ के स्तर की चेतना पैदा हो सकती है उसमें राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने का काम बुद्धि जीवियों का है।

लेनिन ने यह सिद्धान्त रखा की अन्तर्राष्ट्रीय

क्षेत्र में अल्प - विकसित देशों को साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष चला कर क्रांति की ज्वाला प्रज्वलित करनी चाहिए।

रोजा लक्ज़मबर्ग → कामगार वर्ग को स्वयं वर्ग-संघर्ष का सामाजिक अनुभव प्राप्त करके अपने अन्दर चेतना विकसित करनी चाहिए।

जार्ज ल्युकाच (History and class consciousness)

वर्ग चेतना का अर्थ यह नहीं है कि किसी स्थिति विशेष में वर्ग-संघर्ष के सदस्य स्वयं क्या अनुभव करते हैं बल्कि यह चेतना कुछ सुलझे हुए लोगों के मन में पैदा होगी जो सम्पूर्ण सामाजिक विचारों को ध्यान में रखकर उपयुक्त विचारों और कार्यवाही के बारे में निर्णय कर सकेगी।

आर्थिक आधार

अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त :

वर्ग संघर्ष का तार्किक आधार

+ मार्क्सवाद का आर्थिक आधार ।

अतिरिक्त मूल्य :- श्रमिक द्वारा अतिरिक्त श्रम करके कमाया गया जो मूल्य उसे प्राप्त नहीं होता ।

मार्क्स के अनुसार अतिरिक्त मूल्य उन दो मूल्यों का अन्तर है जो एक श्रमिक पैदा करता है और वह जो प्राप्त करता है अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त श्रम पर आधारित है।

पूंजीवाद व्यवस्था के अन्तर्गत मजदूर को अपने श्रम को बेचना पड़ता है श्रम अधिक मात्रा में होने के कारण सस्ता मिलता है जिसका फायदा पूंजीपतियों का द्वारा उठाया जाता है।

मजदूर को 6 घंटे का वेतन देकर 10 घंटे काम करवाया जाता है और 4 घंटे का वेतन स्वयं ले लेता है और इसी 4 घंटे को अतिरिक्त मूल्य कहा जाता है।

प्राकृतिक मूल्य :- किसी वस्तु में लगा श्रम, कच्चामाल, मशीन तथा अन्य तत्वों को मिलाकर जो वस्तु का मूल्य बनता है उसे प्राकृतिक मूल्य कहते है और पूंजीपति इसे बढ़ाकर बेचते है, जिससे वो दोहरा फायदा उठाते है यह फायदा मजदूरों को मिलना चाहिए परन्तु यह पूंजीपतियों की जेब में जाता है

आलोचना :-

(i) मार्क्स ने केवल मजदूर के श्रम के अतिरिक्त मूल्य का कारण माना है जबकि व्यवहार में पूंजीपति के द्वारा किया गया। पूंजी निवेश उसका प्रबन्धकीय कौशल, मानसिक श्रम की भी मूल्य वृद्धि

में योगदान देते हैं।

(ii) M.N राय के अनुसार कोई भी व्याख्या मजदूरों से अतिरिक्त मूल्य लिए बिना कार्य नहीं कर सकती क्योंकि तकनीकि, आधुनिकीकरण आधारभूत संरचना के निर्माण और औद्योगिक शोध के लिए धन की आवश्यकता होती है।

(iii) मैक्स बैबर ने अतिरिक्त मूल्य के सिद्धान्त को केवल राजनीतिक, सामाजिक नारे-बाजी बताया

निष्कर्ष :-

इस प्रकार अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त तार्किक दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है लेकिन यह काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके द्वारा मार्क्स ने पूंजीवादी व्यवस्था में होने वाले मजदूरों के शोषण को उजागर किया है।

→ मार्क्स ने पूंजीवाद व्यवस्था के नैतिक आधार पर ... की और इससे पूंजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध क्रांति के विचार को मजबूती मिलती है।

मार्क्स के क्रांति पर विचार :

मार्क्स का मानना था कि वर्ग-संघर्ष सुलह-समझौते से समाप्त होने वाला नहीं है और न ही धनवान वर्ग को समझा बुझाकर अपने विशेषाधिकार छोड़ देने के लिए था।

अतः मार्क्स का मानना था कि वर्ग-संघर्ष तथा उत्पीड़न को समाप्त करने के लिए क्रांति की आवश्यकता है।

मार्क्स के अनुसार क्रांति का अर्थ है पुरानी उत्पादन प्रणाली को हटाकर नई उत्पादन प्रणाली की स्थापना करना।

उत्पादन प्रणाली आधार है अतः आधार में परिवर्तन होते ही ही अधिरचना में भी परिवर्तन होते हैं और एक नई व्यवस्था का जन्म होता है।

मार्क्स के शब्दों में क्रांति एक छलांग है।

→ क्रांति का मुख्य कारण उत्पादन की शक्तियों और उत्पादन के संबंधों के बीच पैदा होने वाला अन्तः विरोध किया है।

(i) पूँजीपति व मजदूर वर्ग के हित असमान हैं क्योंकि एक का लाभ दूसरे की हानि है ऐसी स्थिति में शान्तिपूर्ण समाधान संभव नहीं है।

(ii) मार्क्स यह मानते हैं कि पूँजीपति वर्ग कि जो सम्पत्ति है वह मजदूर वर्ग के श्रम की चोरी से उत्पन्न हुई है यह अन्यायपूर्ण है। क्रांति के दौरान मजदूर वर्ग हिंसा का प्रयोग कर उसे वापस प्राप्त करे तो वह उचित है।

सर्वहारा वर्ग की तानाशाही पर विचार :-

यह क्रांति के बाद की अवस्था है मार्क्स के अनुसार यह अस्थायी व

संक्रमणशील है। सर्वहारा की तानाशाही भी वर्ग संघर्ष का एक रूप है। इसमें समाज का बहुसंख्यक वर्ग शासन करता है
↳ इसमें पूंजीपति वर्ग को पूर्णतः समाप्त किया जाता है।
इस शब्दावली का प्रयोग करते समय अधिनायक का जो अर्थ मार्क्स के ध्यान में रहा था वह रोम के इतिहास से जुड़ा था। प्राचीन रोम में ऐसे मुख्य दंडाधीश को अधिनायक कहा जाता था जिसे आपातकाल के दौरान पूर्ण शक्ति सौंप दी जाती थी।
(अधिनायक एक प्रभावशाली प्रशासक था।)

सर्वहारा तीन तरह से कार्य करता है
(i) रक्षात्मक कार्य
(ii) विकासात्मक कार्य
(iii) शैक्षिक - सांस्कृतिक कार्य

मार्क्स का आदर्श साम्यवादी व्यवस्था :-
आदर्श साम्यवादी अवस्था सामाजिक विकास की उच्चतम अवस्था है। यह सभी प्रकार के अन्तःविरोधों से मुक्त हो और स्थायी व अपरिवर्तनशील है। इसमें ~~निजि~~ निजी सम्पत्ति का अभाव होता है।
संसाधन वितरण :- प्रत्येक से उसकी क्षमता अनुसार कार्य और प्रत्येक को आवश्यकता अनुसार भुगतान (वेतन)।

→ इस अवस्था में मनुष्य का अलगाव समाप्त होगा और वास्तविक स्वतंत्रता सुनिश्चित होगी।

मार्क्सवाद इनको समाप्त करने पर बल देता है।
→ प्राकृतिक वस्तुनिष्ठ नियम – भूख, प्यास, बीमारी मनुष्य को विवश बनाते हैं
→ समाज के वस्तुनिष्ठ नियम → असमानता, निजी सम्पत्ति
→ वर्ग-विभाजन

धर्म पर मार्क्स के विचार :-

मार्क्स : 'धर्म' जनता की अफिम है। मार्क्स ने मनुष्य के लिए धर्म को हानिकारक बताया है। धर्म एक मिथ्या चेतना है जो शासक वर्ग के हितों को पूरा करती है। धर्म शोषित वर्ग की कार्यकारी क्षमताओं को नष्ट कर देता है और अंततः शासक को फायदा होता है।

धर्म और अफीम में समानताएँ :-

अफीम	धर्म
(i) अफीम व्यक्ति को निष्क्रिय बना देता है और अपने प्रति होने वाले अन्याय को बर्दाश्त कर लेता है	धर्म व्यक्ति को क्रांति से अलग कर देता है यह निष्क्रिय बना देता है, शोषण सहने के लिए।
(ii) अफीम व्यक्ति को आदि बना देता है उससे व्यक्ति की तार्किकता खत्म हो जाती है।	धर्म भी आस्था पर आधारित है इसलिए धर्म भी व्यक्ति की तार्किकता को खत्म कर देता है।

"धर्म दोषपूर्ण आर्थिक व्यवस्था का प्रतिबिम्ब मात्र है और यह अफीम के नशे के समान है।

राष्ट्रवाद पर मार्क्स के विचार :-
मार्क्स राष्ट्रवाद का विरोध करता है। राष्ट्रवाद एक मिथ्या चेतना है। यह एक बुर्जुआ संकल्पना है जो शासक वर्ग के हितों को पुरा करती है। 355

राष्ट्रवाद के विरोध के कारण :-
राष्ट्रवाद का विचार मजबुत होता है तो मजदूर की वर्ग चेतना कमजोर होती है। राष्ट्रीय चेतना वर्ग चेतना को कमजोर करती है। जिसके कारण वर्ग अपने लिए वर्ग नहीं बन पाता है और क्रांति रुक जाती है।

- लेनिन ने राष्ट्रवाद को साम्राज्यवाद और अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों का कारण माना है।

मार्क्स के अनुसार " सर्वहारा का कोई देश नहीं होता। "

Question जॉन लॉक के सामाजिक समझौते सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या करो

Answer राजनीति विज्ञान में जॉन लॉक एक महत्वपूर्ण राजनीतिक विचारक है, जिन्हें 'उदारवाद का जनक' भी कहा जाता है। इन्होंने अधिकार, सामाजिक समझौता, क्रांति, अनुभवनात्मक शक्ति आदि का वर्णन किया है। जिन्हें जॉन लॉक का योगदान समझा जा सकता है -

Books

Letter on tolerence.

Two Treaties of Govt.

Essay conscerining human under standing

अध्ययन पद्धति → अनुभव या विवेकात्मक पद्धति (Rational Method) [अनुभव के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है]

लॉक का सामाजिक समझौता सिद्धान्त :-

लॉक ने राज्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत किए है, उन्होंने माना कि व्यक्ति एक विवेकशील प्राणी है। व्यक्ति ने अपने विवेक के आधार पर एक यंत्र की तरह राज्य का निर्माण किया है। जिसे 'सामाजिक समझौते' का नाम दिया अर्थात् लॉक के राज्य की उत्पत्ति सामाजिक समझौता सिद्धान्त से हुई है।

लॉक के सामाजिक समझौते सिद्धान्त को निम्न बिन्दुओं से समझा जा सकता है

Page No. 103

(i) प्राकृतिक अवस्था -
लॉक ने एक कल्पना की है जिसमें उसने मानव के विकास को उस अवस्था में ला दिया जहाँ मानव अपनी प्रारम्भिक अवस्था में था इसी को उसने प्राकृतिक अवस्था कहा।
जॉन लॉक के प्राकृतिक अवस्था की निम्न विशेषताए है -

(i) सभी मनुष्य समान थे।
(ii) प्राकृतिक अवस्था में शान्ति, सहयोग, सद्भावना पर आधारित होने के कारण सभी मनुष्य समान व स्वतंत्र माने जाते थे। कोई भी व्यक्ति किसी व्यक्ति को हानी पहुँचाने का प्रयास नहीं करता था

~~(iii) क्स~~

(iii) मानव स्वभाव :- लॉक के अनुसार मनुष्य स्वभाव से एक सामाजिक प्राणी है। जो पारस्परिक सहयोग, सद्भाव, प्रेम के आधार पर व्यक्तियों से अपने संबंध स्थापित करते थे।

(iiii) प्राकृतिक अधिकार :- लॉक ने प्राकृतिक अवस्था में कुछ प्राकृतिक अधिकार भी दिए

(A) जीवन का अधिकार
(B) स्वतंत्रता का अधिकार
(C) सम्पत्ति का अधिकार

(iv) समझौते के कारण :-

लॉक के अनुसार उसकी प्राकृतिक अवस्था स्वर्णिम अवस्था थी। परन्तु प्राकृतिक अवस्था में तीन कमियाँ थी

(A) इसमें कोई निश्चित प्रकट व सार्वभौम्य विधि का अभाव था। जो उचित व अनुचित का निर्णय कर सके।

(B) प्राकृतिक नियम एवं प्राकृतिक नियमों को क्रियान्वित करने वाली कोई संस्था नहीं थी।

सम्पत्ति के अधिकार के कारण सभी व्यक्तियों ने अधिक से अधिक अधिकरण करना शुरु कर दिया। सम्पत्ति के अधिकरण के कारण ईर्ष्या, द्वेष, भेदभाव आदि की स्थिति बढ़ने लगी। और इस कारण यह अवस्था अराजकता युक्त व मत्स्य न्याय युक्त हो गई।

(v) सामाजिक समझौता :-

अराजकता की अवस्था के कारण लोग भयभित हो गए इससे जीवन, स्वतंत्रता व सम्पत्ति का अधिकार खत्म से पर खतरा आ गया। इसी खतरे को दूर करने के लिए आपस में मिलकर समझौता करते है।

यहाँ जॉन लॉक दो समझौते की बात करता है

(A) जनता + समाज के बीच में

इस समझौते के द्वारा समाज को व्यक्ति अपने अधिकार सौंपते है।

(B) दूसरा जनता + सरकार के मध्य।
इस समझौते में समाज द्वारा सारे अधिकार सरकार को सौंपे जाते है और इन अधिकारों की रक्षा की गारन्टी दी जाती है। अगर सरकार इन अधिकारों को पूर्ण करने में असफल होती है तो जनता सरकार के विरुद्ध क्रांति कर उसे हटा सकती है

सरकार
(Civil Society)

(v) सत्ता का स्वरूप :- लोकतांत्रिक सरकार।

लॉक के राज्य की विशेषताए :- निम्न है -

(i) राज्य सहमति पर आधारित - राज्य का निर्माण जनता की सहमति पर हुआ है।

(ii) राज्य जनकल्याण का एकमात्र साधन :- जनता का कल्याण राज्य द्वारा ही किया जा सकता है।

(iii) सिमित एवं मर्यादित राज्य - लॉक मे शासन की सम्पूर्ण शक्ति हॉब्स की तरह एक व्यक्ति को नहीं सौंपी बल्कि सम्पूर्ण समाज के हाथ मे रहने दी, इससे राज्य निरंकुश नहीं होगा। बल्कि राज्य सिमित होगा।

(iv) वैधानिक राज्य :—
राज्य का संचालन विधि द्वारा किया जाएगा।

(v) क्रांति की अवधारणा :—
जॉन लॉक पहले विचारक थे जिन्होंने जनता को क्रांति करने की अवधारणा दी।

निष्कर्ष :—
जॉन लॉक ने हाब्स की तरह ही सामाजिक समझौता का सिद्धान्त दिया। लॉक प्राकृतिक अधिकार महत्वपूर्ण रहा कांत के बारे में कहा कि हमें दूसरे व्यक्ति के साथ भी जिस व्यवहार की उम्मीद अपने लिए उससे प्राप्त करने के लिए चाहते हो उसी तरह उस के साथ भी तुम वैसा ही व्यवहार करो। जॉन लॉक के समझौते की आलोचनाए भी रही है क्योंकि वह समाज को एक ~~पक्षियच~~ पक्ष से ही देखता है।

लिबर्टी इन मॉडर्न स्टेट
दी अमेरिकन प्रेसीडेंसी

→ Book → A Grammar of Politics

लास्की

राजनीति विज्ञान में लास्की का महत्वपूर्ण योगदान रहा
लॉस्की ने स्वतंत्रता सम्बंधि विचार प्रस्तुत किए। लॉस्की ने अपनी विविध पुस्तकों में स्वतंत्रता के सम्बन्ध में भिन्न -2 विचार प्रस्तुत किए लेकिन मूल तत्व लगभग समान ही है। लास्की की स्वतंत्रता विषयक धारणा का प्रथम तत्व यह है कि व्यक्ति के जीवन पर अनुचित प्रतिबन्धों का अभाव होना चाहिए।

लास्की के अनुसार " स्वतंत्रता से मेरा तात्पर्य यह है कि सामाजिक परिस्थितियों के अस्तित्व पर प्रतिबंध न हो जो आधुनिक सभ्यता में मनुष्य के सुख के लिए नितान्त आवश्यक है।"

लास्की ने स्वतंत्रता के तीन रूप दिए —

(1) व्यक्तिगत
(2) राजनीति
(3) आर्थिक

28/9/22

(1) व्यक्तिगत स्वतंत्रता :-
इससे तात्पर्य यह है कि व्यक्ति का अपनी इच्छा के अनुसार वह अपना जीवनयापन कर सकता है। राज्य के द्वारा उस स्वतंत्रता की रक्षा तभी सम्भव है

है जबकि उसके अनुचित कार्यों का प्रतिरोध करने की चेतना और शक्ति राज्य में हो।

(ii) राजनीतिक स्वतंत्रता :-

इससे तात्पर्य राज्य के मामलों में सक्रिय हो पाने की शक्ति है। इनमें विचार व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रमुख है। शिक्षा व प्रेस की स्वतंत्रता श्रेष्ठ राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए आवश्यक शर्तें हैं।

(iii) आर्थिक स्वतंत्रता :-

इसके अन्तर्गत व्यक्ति को अपनी योग्यता के अनुसार रोजी कमाने का अधिकार तथा पर्याप्त वेतन पाने का अधिकार सम्मिलित है।